



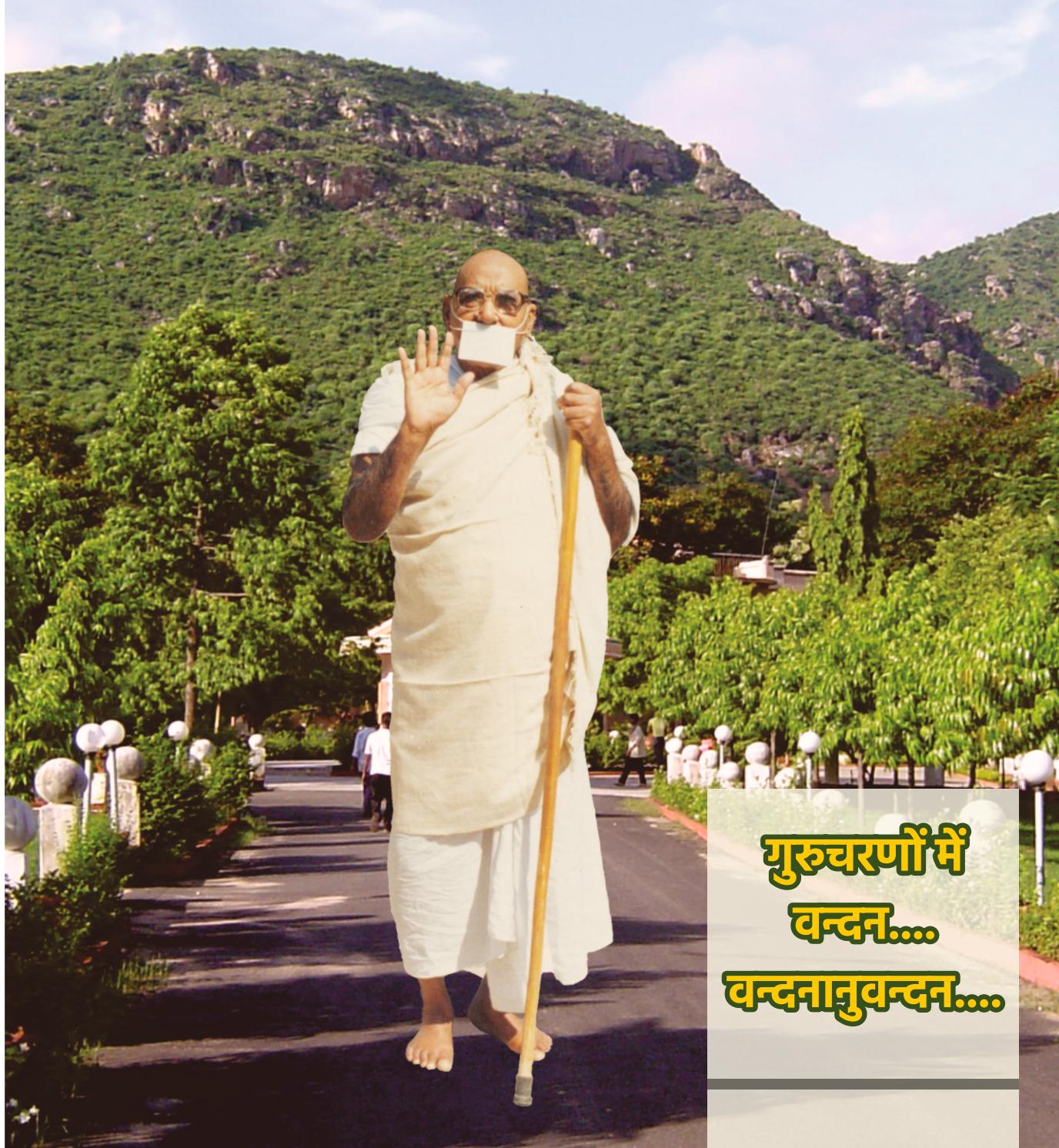
# श्री अमर मारती

वीरायतन की मासिक पत्रिका

सितम्बर-अक्टूबर- 2023

वर्ष-66

अंक-09-10 मूल्य: रु० 10/-



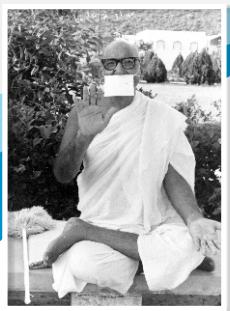


# श्री अमर भारती

वीरायतन की मासिक पत्रिका

सितम्बर-अक्टूबर-2023

वर्ष: 66 अंक: 09-10



संस्थापक  
उपाध्यायश्री अमरमुनि



दिशा-निर्देश  
आचार्यश्री चन्दनाश्रीजी  
•  
सम्पादक  
साध्वीश्री साधनाजी  
•  
महामंत्री  
नवीन चंद सुचंती

श्री अमर भारती

01

सितम्बर-अक्टूबर - 2023

## उद्बोधन

सुख-दुःख दोनों क्षणभंगुर है,  
क्या हंसना क्या रोना?  
रहो अकर्म कर्मरत रहकर,  
मन का कलिमल धोना॥

जीवन श्रेष्ठ, वही जीवन है,  
जिसकी परिणति निज-पर-हित में।  
केवल निज, अथवा केवल पर,  
ग्राह्य नहीं है जीवन-पथ में॥

उभयमुखी दीपक की लौ है,  
निज-पर को उद्योतित करती।  
ज्योतिर्मय जीवन की लौ भी,  
निज-पर का हित साधित करती॥

- उपाध्यायश्री अमरमुनि

This issue of Shri Amar Bharti can be downloaded  
from our website- [www.veerayatan.org](http://www.veerayatan.org)

## अनुक्रमणिका

उद्बोधन	उपाध्याय अमरमुनि	01
श्री पाश्व चिन्तामणि-स्तोत्र		03
जैन-संस्कृति की अमर देनः अहिंसा	उपाध्याय अमरमुनि	05
समभावी साधक : गज कुमार	उपाध्याय अमरमुनि	10
परम स्वतन्त्रता के उद्गाता महावीर	आचार्य चन्दना	22
शक्ति पूजा	उपाध्याय अमरमुनि	26
धर्म जीवन है	साध्वी शुभम्	32
तपस्की साध्वीश्री सुमेधाजी का अभिनन्दन		33
निर्वाणभूमि पावापुरी के बच्चों को....	मंजु बोरा एवं स्नेहलता सुराणा	34
विश्व स्तर पर- पर्युषण महापर्व समारोह		36
जन्मोत्सव पूज्य गुरुदेव उपाध्यायश्री अमरमुनि महाराज का बड़ा कौन?		43
क्या पटाखें आनन्द देते हैं?		45
नियति बलवान है या पुरुषार्थ		46
समय प्रतिबद्धता		47
		48

## पर्व-साधना

-उपाध्याय अमरमुनि

पर्व-साधना निज को निर्मल,  
करने में हैं, और नहीं कुछ।  
कलुषित मन, वाणी, कर्मों को,  
धोने में हैं, और नहीं कुछ॥

क्षमा, दया, करुणा की गंगा,  
बहती है कल-कल-कल-कल।  
घृणा-वैर के, द्वेष-दंभ के,  
धो डालो सारे कलिमल॥



## श्री पाश्व चिन्तामणि - स्तोत्र

पातालं कलयन् धरां धवलयन्नाकाशमापूरयन्,  
दिक्चक्रं क्रमयन् सुरासुरनर श्रेणिं च विस्मापयन्।  
ब्रह्माण्डं सुखयन् जलानि जलधेः फेनच्छलाल्लोलयन्,  
श्री चिन्तामणि पाश्वसंभवयशो हंसश्चिरम् राजते ॥२॥

तीर्थकर प्रभुपाश्व जिनेश्वर के दिव्य शरीर की विलक्षण सुन्दरता का कथन करके अब महामनस्की आचार्य अपने भावों को समर्पित करते हुए प्रभु पाश्व की यशोगाथा का अद्भुत वर्णन कर रहे हैं। उनके यश को हंस की उपमा देकर कहते हैं कि प्रभु का यश आकाश-पाताल, जल-थल सर्वत्र प्रसारित है।

भक्तिरस में सराबोर आचार्य अपने नाम को भी जल बिन्दु की तरह भक्तिसागर में विलीन कर देते हैं।

## शब्दार्थ :-

(पातालम्) पाताल को (कलयन्) पूरित करता हुआ (धराम्) भूतल को (धवलयन्) धवल करता हुआ (आकाशम्) आकाश को (आपूरयन्) व्याप्त करता हुआ (दिक्चक्रम्) दिङ्-मण्डल को (क्रमयन्) उल्लंघन करता हुआ (सुरासुरनरश्रेणीम्) देव, दानव और मानव की श्रेणी को (विस्मापयन्) आश्चर्य-चकित करता हुआ (जलधेः) सागर के (जलानि) जलों को (फेनच्छलात्) फेन के छल से (लोलयन्) कपाता हुआ (श्री चिन्तामणि) श्री चिन्तामणि (पाश्व संभव) पाश्वनाथ से उत्पन्न (यशो हंसः) यश रूपी हंस (चिरम्) चिरकाल तक (राजते) शोभायमान है।

## भावार्थ:-

भगवान् चिन्तामणि पाश्वनाथ का यश समस्त लोक में परिव्याप्त था। प्रस्तुत श्लोक में भगवान् के यश को हंस कहा गया है। जिस प्रकार हंस उज्ज्वल होता है, उसी प्रकार भगवान का यश भी उज्ज्वल एवं धवल है।

चिन्तामणि पाश्वनाथ का यशोरूपी हंस सर्वत्र अव्याहत-गति है, विश्व का वह कौन-सा स्थान है, जहाँ वह न पहुँचा हो?

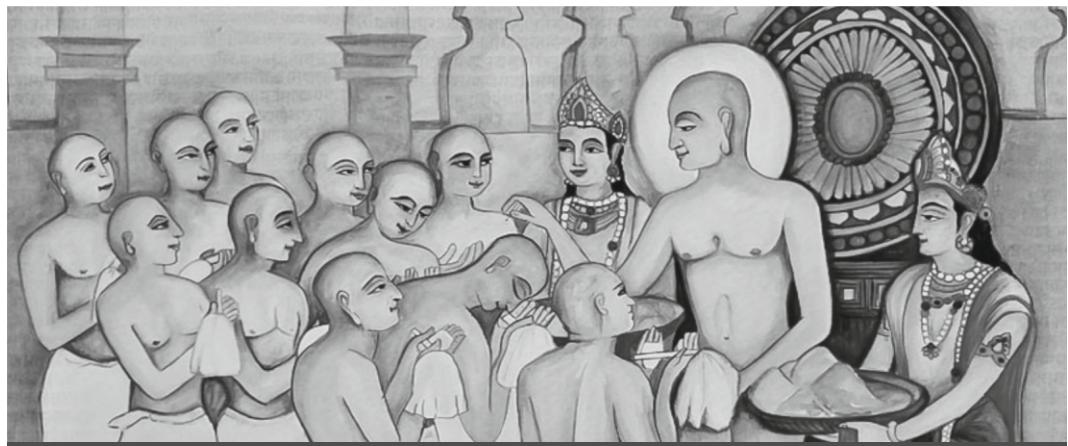
उसने अपने धवलिमा से इस धरा को धवल बनाया, पाताल के घोर अन्धकार को नष्ट किया, समस्त आकाश को उसने पूर दिया : समग्र दिशाओं की सीमा को वह पार कर गया। उसने अपनी उज्ज्वल धवलिमा से स्वर्गवासी देवों को विस्मित किया, पाताल के असुरों को चकित किया, और भू-लोक के मानवों को स्तब्ध किया। उसने अपनी लीलाओं से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को सुखी बना दिया। उसने जलधि की जल-राशि को झकझोर कर फेनमय कर डाला। भगवान् पाश्वनाथ का वह यशोहंस चिरकाल तक सुशोभित होता रहे।

### जिजाइा-

गुरुदेव! प्रकृति ने मुवर्ण को पृथ्वी के पेट में क्यों छुपाकर रखा? और फूलों को खुले उपर्वन में क्यों खिला दिया?

### समाधान-

आयुष्मान! क्योंकि मुवर्ण की मौहकता मनुष्य के दुःख का कारण बनती है। और फूलों की मौहकता मनुष्य के आनन्द का कारण बनती है।



## जैन - संस्कृति की अमर देन : अहिंसा

-उपाध्याय अमरमुनि

जैन-संस्कृति की संसार को जो सबसे बड़ी देन है, वह है, अहिंसा। अहिंसा का यह महान् विचार, जो आज विश्व को शान्ति का सर्वश्रेष्ठ साधन समझा जाने लगा है और जिसकी अमोघ शक्ति के सम्मुख संसार की समस्त संहारक शक्तियाँ कुण्ठित होती दिखाई देने लगी हैं, जैन-संस्कृति का प्राण है, जैन धर्म का आधार हैं।

### दुःख मनुष्य ने ही पैदा किया है

जैन-संस्कृति का महान् संदेश है कि कोई भी मनुष्य समाज से सर्वथा पृथक् रहकर अपना अस्तित्व कायम नहीं रख सकता। समाज में घुल-मिल कर ही वह अपने जीवन का आनन्द उठा सकता है और आस- पास के संगी-साथियों को भी उठाने दे सकता है। जब यह निश्चित है कि व्यक्ति समाज से अलग नहीं रह सकता, तब यह भी आवश्यक है कि

वह अपने हृदय को उदार, विशाल तथा विराट् बनाये और जिन लोगों से खुद को काम लेना है या जिनको देना है, उनके हृदय में अपनी ओर से पूर्ण विश्वास पैदा करे। जब तक मनुष्य अपने पाश्वर्ती समाज में अपनेपन का भाव पैदा नहीं करेगा अर्थात् जब तक दूसरे लोग उसको अपना न समझेंगे और वह भी दूसरों को अपना न समझेगा, तब तक समाज का कल्याण नहीं हो सकता। मनुष्य-मनुष्य में एक-दूसरे के प्रति अविश्वास ही अशान्ति और विनाश का कारण बना हुआ है।

संसार में जो चारों ओर दुःख का हाहाकार है, वह प्रकृति की ओर से मिलनेवाला तो बहुत ही साधारण है। यदि अन्तर्निरीक्षण किया जाए, तो प्रकृति के दुःख की अपेक्षा हमारे सुख में ही अधिक सहायक है। वास्तव में जो कुछ भी ऊपर का दुःख है, वह मनुष्य

पर मनुष्य के द्वारा ही लादा हुआ है। यदि हर एक व्यक्ति अपनी ओर से दूसरों पर किये जाने वाले दुःख के कारणों को हटा दे, तो यह संसार आज ही नरक से स्वर्ग में बदल सकता है।

### सुख का साधन ‘स्व’ की सीमा

जैन-संस्कृति के महान् संस्कारक अन्तिम तीर्थकर भगवान् महावीर ने तो राष्ट्रों में परस्पर होने वाले युद्धों का हल भी अहिंसा के द्वारा ही बतलाया है। उनका उपदेश है कि मनुष्य ‘स्व’ की सीमा में ही सन्तुष्ट रहे, ‘पर’ की सीमा में प्रविष्ट होने का कभी भी प्रयत्न न करे। ‘पर’ की सीमा में प्रविष्ट होने का अर्थ है, दूसरों के सुख-साधनों को देखकर लालायित होना और उन्हें छीनने का दुस्साहस करना।

हाँ, तो जब तक नदी अपनी धारा में प्रवाहित होती रहती हैं, तब तक उससे संसार को अनेक प्रकार के लाभ मिलते रहते हैं, हानि कुछ भी नहीं। ज्यों ही वह अपनी सीमा से हटकर आस-पास के प्रदेश पर अधिकार जमा लेती है, बाढ़ का रूप धारण कर लेती है, तो संसार में हाहाकार मच जाता है, प्रलय का दृश्य खड़ा हो जाता है। यही दशा मनुष्यों की है। जब तक सहजभाव से सब मनुष्य अपने-अपने ‘स्व’ में ही प्रवाहित रहते हैं, तब तक कुछ अशान्ति नहीं है। अशान्ति और विग्रह का वातावरण वहीं पैदा होता है, जहाँ कि मनुष्य ‘स्व’ से बाहर फैलना शुरू करता है, दूसरों के अधिकारों को कुचलता है और

दूसरों के जीवनोपयोगी साधनों पर कब्जा जमाने लगता है।

प्राचीन जैन-साहित्य उठाकर आप देख सकते हैं कि भगवान महावीर ने इस दिशा में बड़े सुत्य प्रयत्न किये हैं वे अपने प्रत्येक गृहस्थ शिष्य को पाँचवें अपरिग्रहब्रत की मर्यादा में सर्वदा ‘स्व’ में ही सीमित रहने की शिक्षा देते हैं। व्यापार तथा उद्योग आदि क्षेत्रों में उन्होंने अपने अनुयायियों को अपने न्याय-प्राप्त अधिकारों से कभी भी आगे नहीं बढ़ने दिया। प्राप्त अधिकारों से आगे बढ़ने का अर्थ है, अपने दूसरे साथियों के साथ संघर्ष में उतरना।

जैन-संस्कृति का अमर आदर्श है कि प्रत्येक मनुष्य अपनी उचित आवश्यकता की पूर्ति के लिए, अपनी मर्यादा में रहते हुए, उचित साधनों का ही प्रयोग करें। आवश्यकता से अधिक किसी भी सुख-सामग्री का संग्रह कर रखना, जैन-संस्कृति में चोरी है। व्यक्ति, समाज अथवा राष्ट्र आपस में क्यों लड़ते हैं, इस प्रश्न का उत्तर है कि वे इसी अनुचित संग्रह-वृत्ति के कारण लड़ते हैं। दूसरों के जीवन की तथा जीवन के सुख-साधनों की उपेक्षा करके मनुष्य कभी भी सुख-शान्ति नहीं प्राप्त कर सकता। अहिंसा के बीज अपरिग्रह-वृत्ति में ही ढूँढ़ें जा सकते हैं। एक अपेक्षा से कहें, तो अहिंसा और अपरिग्रह वृत्ति दोनों पर्यायवाची शब्द हैं।

### ‘युद्ध’ और ‘अहिंसा’

आत्म-रक्षा के लिए उचित प्रतिकार के साधन जुटाना, जैन-धर्म के विरुद्ध नहीं है। परन्तु आवश्यकता से अधिक संगृहीत एवं संगठित शक्ति अवश्य ही संहार-लीला का अभिनय करेगी, तथा अहिंसा को मरणोन्मुखी बनायेगी। अतएव आप आश्चर्य न करें कि पिछले कुछ वर्षों से जो शस्त्र-सन्यास का आन्दोलन चल रहा है, प्रत्येक राष्ट्र को सीमित युद्ध-सामग्री रखने को कहा जा रहा है, वह तीर्थकरों ने हजारों वर्ष पहले चलाया था। आज जो काम कानून तथा संविधान के द्वारा लिया जाता है, उन दिनों वह उपदेश के द्वारा लिया जाता था। भगवान् महावीर ने बड़े-बड़े राजाओं को जैन-धर्म में दीक्षित किया था और उन्हें नियम कराया गया था कि वे राष्ट्ररक्षा के काम में आनेवाले आवश्यक शस्त्रों से अधिक शस्त्र-संग्रह न करें। साधनों का आधिक्य मनुष्य को उद्धण्ड और बेलगाम बना देता है।



प्रभुता की लालसा में आकर वह कभी-न-कभी किसी पर चढ़ दौड़ेगा और मानव-संसार में युद्ध की आग भड़का देगा। इस दृष्टि से तीर्थकर हिंसा के मूल कारणों को दूर करने का प्रयत्न करते रहे हैं।

तीर्थकरों ने कभी भी युद्धों का समर्थन नहीं किया। जहाँ अनेक धर्माचार्य साम्राज्यवादी राजाओं के हाथों की कठपुतली बनकर युद्ध का उन्मुक्त समर्थन करते आए हैं, युद्ध में मरने वालों को स्वर्ग का लालच दिखाते आए हैं, राजा को परमेश्वर का अंश बताकर उसके लिए सब कुछ अर्पण कर देने का प्रचार करते आए हैं, वहाँ तीर्थकर इस सम्बन्ध में बहुत ही स्पष्ट और दृढ़ रहे हैं। ‘प्रश्न व्याकरण’ और ‘भगवती सूत्र’ युद्ध के विरोध में बहुत कुछ कहते हैं। यदि थोड़ा-सा कष्ट उठाकर देखने का प्रयत्न करेंगे, तो वहाँ बहुत-कुछ युद्ध-विरोधी विचार-सामग्री प्राप्त कर सकेंगे। मगधाधिपति अजातशत्रु कूणिक भगवान महावीर का कितना उत्कृष्ट भक्त था? ‘औपपातिक सूत्र’ में उसकी भक्ति का चित्र चरम सीमा पर पहुँचा हुआ है। प्रतिदिन भगवान के कुशल-समाचार जानकर फिर अन्न-जल ग्रहण करना, कितना उग्र नियम है। परन्तु वैशाली पर कूणिक द्वारा होनेवाले आक्रमण का भगवान महावीर ने जरा भी समर्थन नहीं किया। प्रत्युत कूणिक के प्रश्न पर उसे अगले जन्म में नरक का अधिकारी बताकर उसके क्रूर-कर्मों को स्पष्ट ही

धिकारा है। अजातशत्रु इस पर रुष्ट भी हो जाता है, किन्तु भगवान महावीर इस बात की कुछ भी परवाह नहीं करते। भला, अहिंसा के अवतार उसके रोमांचकारी नरसंहार का समर्थन कैसे कर सकते थे?

तीर्थकरों द्वारा उपदिष्ट अहिंसा निष्क्रिय अहिंसा नहीं है। वह विधेयात्मक है। जीवन के भावात्मक रूप- प्रेम, परोपकार एवं विश्व-बन्धुत्व की भावना से ओत-प्रोत है। जैन-धर्म की अहिंसा का क्षेत्र बहुत ही व्यापक एवं विस्तृत है। उसका आदर्श, ‘स्वयं आनन्द से जीओ और दूसरों को जीने दो’, यहीं तक सीमित नहीं है। उसका आदर्श है- ‘दूसरों के जीने में सहयोगी बनो, बल्कि अवसर आने पर दूसरों के जीवन की रक्षा के लिए अपने जीवन की आहुति भी दे डालो।’ वे उस जीवन को कोई महत्व नहीं देते, जो जन-सेवा के मार्ग से सर्वथा दूर रहकर एक मात्र भक्तिवाद के अर्थशून्य क्रियाकाण्डों में ही उलझा रहता है।

भगवान महावीर ने एक बार अपने प्रमुख शिष्य गणधर गौतम को यहाँ तक कहा था कि मेरी सेवा करने की अपेक्षा दीन-दुःखितों की सेवा करना कहीं अधिक श्रेयस्कर है। मैं उन्हें अपना भक्त नहीं मानता, जो मेरी भक्ति करते हैं, माला फेरते हैं। किन्तु मैं उन्हें भक्त मानता हूँ, जो मेरी आज्ञा का पालन करते हैं। मेरी आज्ञा है- “प्राणिमात्र की आत्मा को सुख, सन्तोष और आनन्द पहुँचाओ।”

भगवान महावीर का यह महान् ज्योतिर्मय सन्देश आज भी हमारी आँखों के सामने है। इसका सूक्ष्म बीज ‘उत्तराध्ययन-सूत्र’ की सर्वार्थ-सिद्धि-वृत्ति में आज भी हम देख सकते हैं।

### वर्तमान परिस्थिति और अहिंसा

अहिंसा के महान सन्देशवाहक भगवान महावीर थे। आज से अढ़ाई हजार वर्ष पहले का समय, भारतीय-संस्कृति के इतिहास में, एक प्रगाढ़ अन्धकारपूर्ण युग माना जाता है। देवी-देवताओं के आगे पशु-बलि के नाम पर रक्त की नदियाँ बहाई जाती थी, मांसाहार और सुरापान का दौर चलता था। अस्पृश्यता के नाम पर करोड़ों की संख्या में मनुष्य अत्याचार की चक्की में पिस रहे थे। स्त्रियों को भी मनुष्योचित अधिकारों से वंचित कर दिया गया था। एक क्या, अनेक रूपों में हिंसा की प्रचण्ड ज्वालाएँ धधक रही थीं, समूची मानव-जाति उससे संत्रस्त हो रही थी। उस समय में भगवान महावीर ने संसार को अहिंसा का अमृतमय सन्देश दिया। हिंसा का विषाक्त प्रभाव धीरे-धीरे शान्त हुआ और मनुष्य के हृदय में मनुष्य क्या, पशुओं के प्रति भी दया, प्रेम और करुणा की अमृत-गंगा बह उठी। संसार में स्नेह, सद्भाव और मानवोचित अधिकारों का विस्तार हुआ। संसार की मातृजाति नारी को फिर से योग्य सम्मान मिला। शुद्रों को भी मानवीय ढंग से जीने का अधिकार प्राप्त हुआ। और निरीह पशु भी मनुष्य के क्रूर-हाथों से



अभय-दान पाकर भयमुक्त हुए। अहिंसा की प्रतिष्ठा से संसार में सद्भाव और प्रेम की गंगा बहने लगी।

दुर्भाग्य से आज वह प्रेम और सद्भाव की गंगा फिर सूखने जा रही है। ‘अभय’ और ‘मैत्री’ के उपवन में आज भय, छल, प्रपञ्च और धोखाधड़ी के झाड़-झांखाड़ फिर से खड़े हो रहे हैं। संसार विगत दो महायुद्धों की विभीषिका को अभी भूला नहीं है कि तीसरे महायुद्ध के बादल उसके क्षितिज पर मंडराने लगे हैं। प्रत्येक देश शक्ति एवं सेना के विस्तार की होड़ में दौड़ रहा है, भयानक शस्त्रास्त्रों का विस्तार एवं निर्माण करता जा रहा है। संसार

युद्ध और महानाश के द्वार पर खड़ा है।

व्यक्ति, समाज और राष्ट्र आज अविश्वास, भय और आशंकाओं से घिरे हुए हैं। उनका मन, बुद्धि और जीवन अशान्त और भयाक्रान्त-सा है। ऐसे समय में शान्ति और विश्वास का वातावरण निर्माण करने वाली कोई शक्ति है, तो वह अहिंसा ही है। अहिंसा ही मानव-मानव को परस्पर प्रेम, सद्भाव एवं सहयोग के सूत्र में बाँध सकती है। प्रसिद्ध जैनाचार्य समन्तभद्र के शब्दों में- ‘अहिंसा भूतानां जगति विदितं ब्रह्म परमम्’ अर्थात् अहिंसा ही प्राणियों के लिए परमब्रह्म या परम संजीवनी शक्ति है।



## समभावी साधक : गज कुमार

-उपाध्याय अमरमुनि

महाविजेता सम्राट् विक्रमादित्य के राज्य को 1776 वर्ष बीत चुके थे, 77 वाँ वर्ष चल रहा था। भादव का महीना था, आकाश में मेघ मालाएँ इतस्तः दौड़ लगा रही थीं। आकाश बादलों से आच्छन्न था, घटाएँ उमड़-घुमड़ कर आ रहीं थी। काली घटाओं के सदृश्य ही मेरे सिर पर काले घुंघराले बाल लहर-लहर कर लहरा रहे थे। सारा मस्तक बालों से ढका हुआ था। यह मेरा पहला लोच था। सिर का एक-एक बाल हाथ से उखाड़ना था। लोग हैरान थे कि इतना बड़ा लोच कैसे होगा? माताएँ तथा बहनें जिनका हृदय स्वभावतः सुकोमल रहा है और जिनकी स्नेह एवं श्रद्धा हमें अधिक मिलती रही है, उन्हें लोच का सोच ज्यादा था। इस तरह सब भय के बातावरण में बहे जा रहे थे। तरुण आते और पूछते—‘लोच करोगे?’ और हाँ करने पर पूछते—‘कैसे करोगे?’ अपने ही सिर का एक बाल बड़ी देर में उखाड़ते और दर्द का नाटक करते—ओह! बड़ा दर्द होता है, आप इतने सारे

बाल कैसे उखाड़ेंगे?

मेरे बाबा गुरु पूज्य मोतीराम जी महाराज कहते थे कि साधु बनने की कल्पना हो तो पहले विचार करना चाहिए कि उसे शूली की नोक पर चढ़ना है। कब चढ़ना होता है? जबकि पहला लोच होता है। साधुओं को यह भय रहता है कि कहीं शिष्य पहले लोच में भड़क न जाए। अतः गुरु जन उसका लोच उस साधु से करवाते हैं, जिसका हाथ हल्का होता है। पर हाथ के हल्केपन से क्या? आखिर दर्द तो होता ही है। बात यह है कि मन का विश्वास बना रहता है। एक बार हम विहार कर रहे थे, एक गाँव में ठहरे। फाल्युन का महीना था, लोच कराने थे। हम में से एक साधक लोच कराने में कमज़ोर था, वह लोच करवाने बैठा। थोड़ी देर में दर्द होने लगा तो वह गुरुजी से झगड़ बैठा कि आपने लोच के लिए अच्छा दिन नहीं देखा। आज शनिवार को लुञ्चन करने बैठ गए, मुझे तो मार दिया। यदि सोमवार को लुञ्चन करते तो इतनी पीड़ा न

होती। तत्त्वतः यह भ्रान्त धारणा है, वार या मुहूर्त पीड़ा को कभी कम नहीं कर पाते। क्या कभी ऐसा हुआ है कि शनिवार को एक व्यक्ति बेंत से पीटे तब दर्द हो और सोमवार को न हो। मार तो मार है, वह लगेगी ही, चाहे शनिवार हो या सोमवार।

लोच का दर्द होता ही है। न तो वह सोमवार से हल्का होता है और न हल्के हाथ से। उसकी अनुभूति न होने देने में एक ही शक्ति कामयाब होती है, वह है अन्तर बल। आत्म चेतना जागृत रहती है तो लोच सरल लगने लगता है। वेदना तो होती है परन्तु उसका संवेदन नहीं होता, पीड़ा की अनुभूति गौण हो जाती है। मैं बता रहा था, मेरा पहला लोच शुरू हुआ। एक हाथ पड़ा कि दर्द होने लगा; दूसरा, तीसरा, चौथा हाथ पड़ा तो दर्द बढ़ता गया।

मैं आपको अपने जीवन का अनुभव सुना रहा हूँ। पहले लोच के समय दर्द से व्याकुलता बढ़ने लगी तो लोच करने वाले सद्गुरु के मुँह से गज सुकुमार मुनि की क्षमा का एक गीत प्रवाह बह निकला। वह क्षमा का मधुर संगीत वायुमण्डल में मुखरित होने के साथ मेरे जीवन के कण-कण में गूँजने लगा। वह क्षमा का देवता मेरे अन्तर मन में साकार हो उठा। मैं उस विराट शक्ति का चिन्तन करने लगा कि जिसका बाल्यकाल सोने के महलों में गुजरा। जिसके जीवन की घड़ियाँ पुष्प-शय्या पर बीतीं। जिसका शरीर मक्खन की तरह

सुकोमल था जो निरन्तर सुख के पलने में झूलता रहा। जिसने कभी दुःख की दुपहरी का दृश्य ही नहीं देखा। एक दिन वही एकान्त शमशान भूमि में साधक के रूप में अविचल भाव से खड़ा है। मस्तक पर आग धधक रही है, किन्तु वह शान्त है, शीतल है।

उस प्रवाह को जिस ओर बहाना चाहते थे, वह उस ओर प्रवाहित न होकर दूसरी ही दिशा में प्रवाहित हुआ। भारत के महासम्राट् श्रीकृष्ण छोटे भाई के लिए सुखों की दुनिया सजा रहे थे। वह राजकुमार को भोग-विलास एवं ऐश्वर्य की मजबूत बेड़ियों से बाँधने में प्रभावशील थे। तीन खण्ड के सम्राट् उसके विवाह की एवं उसके योग्य महल आदि बनाने की योजना में संलग्न थे, परन्तु होने वाला कुछ और ही था।

उन्हीं दिनों भगवान नेमिनाथ द्वारिका पधारे। गज सुकुमार का पहले कभी भगवान् की सेवा में उपस्थित होने का प्रसंग नहीं आया। यदि कभी आया भी हो तो बताया नहीं गया।



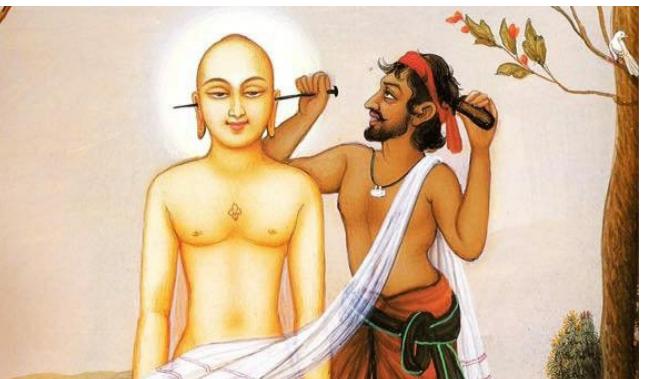
यहाँ इतना ही बताया गया है कि उन्होंने पहली ही बार भगवान् के दर्शन किए थे। कृष्ण के साथ गज सुकुमारजी भी भगवान् की सेवा में जा रहे हैं और रास्ते में ही उसके विवाह की तैयारियाँ हो रहीं हैं। उसके लिए रानियों का निर्वाचन राज सभा व राजभवनों में ही नहीं किया जा रहा है वरन् श्रीकृष्ण रास्ता तय करते हुए भी उस योजना को हल कर रहे हैं और गज सुकुमार के योग्य कन्या सोमा को कुँआरे अन्तेपुर में रखने का आदेश देते हैं। इस तरह योजना को सफल बनाते हुए वे भगवान् के समवशरण में पहुँचे।

वहाँ भगवान की उपदेश-धारा का प्रवाह बह रहा था। उन्होंने गज सुकुमार के लिए कोई विशेष बात नहीं कही। मेघ जब कभी बरसता है तो अमुक भूखण्ड के लिए कोई निश्चित योजना बनाकर नहीं बरसता। वह तो धारा प्रवाह से वर्षा करता है एवं हर प्राणी एवं वस्तु उसे अपने रूप में परिणत करते हैं। वर्षा होते ही बीज अंकुरित हो उठता है। गुलाब उसे सुगन्ध के रूप में परिणत करता है। वही पानी धूरों के कण-कण में प्रविष्ट होकर मादकता में परिणत हो जाता है और काँटों के पौधों में तीक्ष्ण शूलों के रूप में परिणत होता है। पानी तो सब जगह एक रूप में बरसा परन्तु जिस जीव का, जिस वस्तु का

जो स्वभाव था, वह उसे उसी रूप में आत्मसात् करने लगा। ठीक उसी तरह भगवान की उपदेश धारा सब आत्माओं के लिए समान रूप से प्रवाहित थी, परन्तु सभी श्रोता उसे अपने विचारों के अनुरूप ग्रहण कर रहे थे।

#### वैराग्य

गज सुकुमार जब भगवान के दर्शन करने जा रहे थे, तब उनके मन में कुछ और ही कल्पना चल रही थी। सम्भव है, उसके मन में स्वर्ण महल के स्वप्न चक्कर काट रहे हों, धूम-धाम के बाजे बज रहे हों, विवाह का रंगीन चित्र चित्रित हो रहा हो। परन्तु जब वह



भगवान का प्रवचन सुनकर लौटा तो त्याग विराग की भावना लेकर आया। उसके विचार बदल गए, भावों में परिवर्तन आ गया, जीवन में एक नया मोड़ आया। उसके त्यागनिष्ठ प्रवाह को बदलने के लिए परिवार द्वारा बहुत प्रयत्न किया गया, परन्तु वे उसमें सफल नहीं हो सके।

हाँ, तो गज सुकुमार को एक दिन

लोग राजमहल में देखते हैं, फिर साधु बनते हुए देखते हैं और उसी रात शमशान भूमि में ध्यानस्थ खड़े हुए देखते हैं। वहाँ मुर्दे जल रहे हैं, चारों ओर सन्नाटा है, विपत्तियों का सागर गरज रहा है, परीषहों का तूफान उठ रहा है और उसके बीच वह साधक शान्त भाव से अडिग खड़ा है। सर्प, बिच्छू या हिंसक जानवर आए तो उसे क्या? राक्षस, भूत-पिशाच का उपसर्ग हुआ तो उसे क्या? कोई दुष्ट मनुष्य आकर सताए तो उसे क्या? वह अभय का देवता निर्भय, एवं अखेद भाव से खड़ा है। उसके मन के किसी कोने में भय की, विषाद की छाया तक नहीं है। उसे तो आज जीवन का फैसला करना है। वह दृढ़ प्रतिज्ञा बन कर खड़ा है— “कार्यं साधयामि देहं वा पातयामि।” कार्य साध कर ही रहूँगा, भले ही देह गल-गल कर समाप्त हो जाए। परन्तु सिद्धि प्राप्त किए बिना यहाँ से एक इंच भी न हटूँगा।

गज सुकुमार मुनि का जीवन हमारे सामने है। एक दिन में वह सारी भूमिकाओं को पार कर चुका है। बात क्या है? क्या उसने शास्त्र पढ़े थे? नहीं, वह द्वादशांगी का एक अक्षर भी नहीं सीख पाया था। साधु जीवन की क्रियाओं को भी वह नहीं सीख पाया। फिर भी उसे सब कुछ आ गया, वह सब कुछ जान गया। व्यवहार दृष्टि से उसने शास्त्र का अनुशीलन नहीं किया। उसने जो कुछ पढ़ा, वह था भगवान का वही एक प्रवचन। वही

उसके लिए आचारांग सूत्र था और वही दृष्टिवाद था।

जिसके अन्तस्तल में ज्ञानालोक का भास्कर प्रकाशित हो उठता है, तो फिर वे बरसों तक उन्हीं पुराने पन्नों को नहीं पलटते रहते, उन्हीं अतीत की कहानियों को नहीं दोहराते। वे तो निरन्तर आगे बढ़ते हैं, विराट् बनते हैं। अग्नि की छोटी-सी चिनगारी घास-फूस को छू जाती है तो फिर वह विराट् बनती रहती है। हवा के झाँके उसे बुझाने को आते हैं, झाँके ही नहीं, महाकाय अंधड़ आते हैं, तूफान आते हैं, फिर भी वे उसे बुझा नहीं पाते बल्कि उसे और बढ़ा देते हैं। दीपक की लौं को एक हल्का-सा हवा का झाँका बुझा देता है। क्योंकि दिए की शक्ति छोटे-से घेरे में बन्द है। अतः एक के लिए हवा का झाँका बुझाने का काम करता है तो दूसरी जगह प्रज्वलित करने का।

जिस साधक के जीवन में चेतना नहीं है तो वहाँ सुख-दुःख के झाँके उसे बुझा सकते हैं। मान-अपमान की दोनों हवाएँ जिन्दगी को समाप्त करती हैं। तलवारें भी जिन्दगी को बर्बाद करती हैं और गले में पड़े हुए सुवासित पुष्प भी जिन्दगी को बर्बाद करते हैं।

गज सुकुमार के जीवन में साधना की ज्वाला प्रज्वलित हो चुकी थी। उसे बुझाने के लिए सुख-दुःख के तूफान चले। माता-पिता के हजार-हजार आँसू बहते हैं ताकि पुत्र का वैराग्य उन आँसूओं में बह जाए, पर वे गज

सुकुमार को अपने पथ से हटाने में सफल न हो सके वे उस महाशक्ति को विचलित न कर सके। कृष्ण ने भी स्नेह की मधुर धारा बहाते हुए कहा- “भैया! अभी तो तुमने यौवन में पैर रखा है, कुछ दिन दुनिया के सुखों का आनन्द लो। यदि तुम विवाह के दायित्व से बचना चाहते हो तो कोई बात नहीं, उससे मुक्त रह सकते हो। परन्तु तुम राजकुमार हो, अतः राज्य के दायित्व से मत भागो। हम तुम्हें राजा के रूप में देखना चाहते हैं। अधिक नहीं तो एक दिन का भी राज्य करो।” यह भी एक परीक्षा थी, हवा का प्रबल झोंका था।

#### राज्य

राजसिंहासन की बात सुनकर गज सुकुमार मौन रहे। कृष्ण ने सोचा साधना का वेग कुछ मन्द पड़ रहा है। उन्होंने उसे सोने के सिंहासन पर बैठाया और राज्याभिषेक कर दिया। अब बड़े-बड़े राजा महाराजा हीरे जवाहरत की भेंट लेकर आने लगे और नये सम्राट् को अभिवादन करके वह नजराना उनके सामने रखने लगे, सम्पत्ति का ढेर लग गया। कृष्ण ने देखा कि अब मेरी योजना सफल हो रही है। शहद की मक्खी फूलों की ओर जाती है तो भन-भन करती है, पर फूलों पर बैठते ही मौन हो जाती है। इसी तरह मानव भोगों से दूर रहता है तो त्याग-वैराग्य की बातें करता है, साधना की लम्बी-चौड़ी डींगे हाँकता है, सभा सोसायटी तथा विधान सभाओं में क्रान्ति की



सुधार की योजनाएँ रखता है, भनभनाहट करता है मानो कि बड़ा भारी तूफान मचा देगा। परन्तु जैसे ही ऐश्वर्य के निकट पहुँचता है, अधिकार की कुर्सी पर बैठता है तो उसकी आवाज बन्द हो जाती है।

कृष्ण ने सोचा- राज्याभिषेक का नाम सुनते ही मौन हो गया तो अब यह ऐश्वर्य का अम्बार देखकर और जय जय नाद के गगनभेदी स्वर सुनकर साधना-पथ को भूल गया होगा। नये साम्राज्य का स्वप्न देख रहा होगा। कृष्ण ने विनत होकर पूछा- “सम्राट्! आपकी क्या आज्ञा है? क्या किया जाए?” कृष्ण ने सोचा कि नए साम्राज्य में अभिवृद्धि करने की, भव्य भवन बनाने की आज्ञा मिलेगी। उन्हें क्या मालूम कि इसका शरीर तो सोने के सिंहासन पर शोभा पा रहा है, राजा रईसों का अभिवादन ले रहा है, नजराना स्वीकार कर रहा है परन्तु उसकी आत्मा त्याग

विराग के सिंहासन पर विराजमान है, वह भगवान् नेमिनाथ की गोद में जा बैठा है। हाँ, तो सम्राट् गज सुकुमार ने अपना आदेश प्रसारित करते हुए कहा- “मेरी दीक्षा के लिए रजोहरण, पात्र आदि की व्यवस्था कर दें।”

सम्राट् का अध्यादेश सुनते ही श्रीकृष्ण ने कहा- “हम इस गजेन्द्र को कच्चे धागे से बाँधना चाहते थे। इन सिंहासनों ने कोटि-कोटि मनुष्यों को अपने बन्धन में बाँधा इन भोग-विलासों के प्रलोभन में लक्ष-लक्ष आत्माएँ फँस गई। परन्तु सजग आत्मा को सोने के सिंहासन न बाँध सके इस महादावानल को सुख साधनों के ऐश्वर्य एवं जयघोष के झङ्घावात बुझा नहीं सके। वह ज्वाला, जो एक बार प्रज्वलित हो चुकी थी, निरन्तर जलती रही। स्वर्ग और नरक साधक पर तभी तक शासन कर सकते हैं जब तक कि साधक के हृदय में आत्मभाव न उतरा हो।

#### संकल्प बल

आत्मा में जब संकल्प-बल उद्बुद्ध हो जाता है, तो साधक भयानक अटवियों को, निर्जन वनों को निर्भयता से पार कर देता है। वह काँटों की नोंक पर भी हँसता हुआ चलता है। काँटे कंकर उसके पथ को रोक नहीं सकते। जब कभी वह महलों से गुजरता है तो मुस्कराता चलता है और झोंपड़ियों में से गुजरता है तब भी मधुर मुस्कान के साथ गुजरता है। जय नाद के बीच से गुजरता है तो

मन में कोई हर्ष नहीं होता और जब चारों ओर से गालियों की वर्षा होती है, तिरस्कार की बिजलियाँ कड़कती हैं, लोग अपमान कर रहे हैं, फिर भी उसके मन को विषाद की रेखा छू नहीं पाती। उसके ओष्ठ पर हर समय, हर स्थिति में मधुर मुस्कान अठखेलियाँ करती रहती हैं।

#### दीक्षा

हाँ, तो माता-पिता एवं ज्येष्ठ भ्राता से अनुमति प्राप्त करके गज सुकुमार साधना के पथ पर चल पड़ा। दीक्षित हो गया और उसी समय भगवान से आत्म-कल्याण का मार्ग पूछा तब भगवान ने उस नवदीक्षित मुनि को आत्मकल्याण के लिए भिक्षु की 12वीं पड़िमा बताई। उसकी साधना के लिए यह अभिनव साधक निर्जन शमशान भूमि में गया और मन को एकाग्र करके ध्यानस्थ खड़ा हो गया।

#### सिर पर आग

एक ओर हमारा दुर्बल मन है कि जरा-सी धूप लगते ही संकल्प विकल्प के झूले में झूलने लगता है। नहा-सा काँटा चुभते ही आहें भरने लगता है। परन्तु वहाँ क्या हो रहा है? द्वेष की दुर्भावना से प्रेरित सोमिल ने मुनि के सिर पर गीली मिट्टी की पाल बाँधकर उसके अन्दर जाज्वल्यमान अंगारे रखे हैं। मांस जल रहा है, रक्त उबल रहा है, सारे शरीर में तीव्र वेदना हो रही है, फिर भी वह शान्त भाव से अचल खड़ा है। उसके मन में कोई हलचल



नहीं है, किसी तरह की अशान्ति नहीं है। वह साधक जलते हुए आग के शोलों के नीचे भी समभाव में स्थित है।

मैं बता रहा था कि मेरा लुञ्जन हो रहा था और गज सुकुमार मुनि का संगीत चल रहा था। वह क्षमा की दिव्य क्षमा मूर्ति मेरे कण-कण में ज्योतिर्मान हो उठी। मेरा देहाभास दूर होता रहा और आत्मा में नई स्फूर्ति, नई शक्ति और अभिनव तेज जागृत होता रहा। लोच की वेदना कम हो रही थी। और इधर लोच करने वाले सन्तों ने कहा- “आज इतना ही लोच रहने दो। अवशेष एक दो दिन बाद कर देंगे।” भाइयों ने भी आग्रह भरी विनती की कि अवशेष, दो-तीन दिन ठहर कर करा लेना। बहनों ने भी इसी बात का समर्थन किया। परन्तु मैंने दृढ़ स्वर में कहा- ‘नहीं, ऐसा नहीं होगा। मैं लोच कराए बिना एक इंच भी नहीं हटूँगा। मुझे लोच के फैसले को दो तीन दिन की दूरी

पर नहीं छोड़ना है, आज ही, इसी वक्त फैसला करना है। और मैंने बिना किसी खेद के बिना दृन्ध के शान्त-भाव से सारा लोच कराया। दर्द अवश्य हुआ, परन्तु संवेदन की अनुभूति मन्द पड़ गई। वह सहन शक्ति कहाँ से आई? गज सुकुमार मुनि के जीवन से। यह ध्वनि मेरी आत्मा में गूँजती रही—  
**मुनि नजर न खंडी हो, मेटी मन की झाल।**

मस्तक पर आग जल रही है और अन्तर में चिन्तन मनन चल रहा है। शरीर में चपलता नहीं, विचारों में चंचलता नहीं, भावना में आक्रोश नहीं और मन में दुःसंकल्प नहीं। दृष्टि में सौम्यता है, मन में वही वीतराग भावना है। श्रीकृष्ण और माता के प्रति जो भावना बरस रही है वही सुकोमल भावना सोमल के प्रति है। उस क्षण के देवता ने मन की सारी झाल बुझा दी, काम क्रोध पर विजय पा ली।

मन की झाल को शान्त करना सहज नहीं है। बड़े-बड़े योगिराज भी असफल हो जाते हैं। उसे बुझाने के लिए क्षमा की, सहिष्णुता की शक्ति चाहिए। आज तो जरा-जरा सी बात पर मन में विकारों की झालें उठती हैं। दुकान पर जाने की तैयारी में है, भोजन में चन्द मिनट की देर हुई कि पत्नी पर बरस पड़े। तुम समय पर भोजन भी नहीं बना सकतीं? हमें दुकान पहुँचने में देर हो रही है। आपने पीने को पानी माँगा और उधर बच्चा रो रहा है। वह उसे चुप करके पानी ला रही है, पर

आप दो चार मिनट भी सन्तोष नहीं रख पाते। एक दम चिल्ला उठते हैं मैं तो प्यास से मरा जा रहा हूँ और तुम लगी बच्चे को खिलाने। तो आप एक मिनट की देरी भी नहीं सह सकते। पत्नी को, बच्चों को आपके आदेश का तुरन्त पालन करना चाहिए, वह बच्चे को खिला नहीं सकती, बच्चे को पुचकार नहीं सकती, यदि आपका काम है तो। इसी तरह बाजार में किसी ने कुछ कह दिया तो एक दम पारा चढ़ गया और जोश में तन कर गरज पड़े— ‘किससे बात कर रहे हो? जानते नहीं, मैं कौन हूँ?’

#### कषाय

हाँ, तो मन में कषायों की आग जल रही है और उसकी लपटों से व्यक्ति जल रहा है, समाज जल रहा है, संघ जल रहा है, जाति-बिरादरियाँ जल रही हैं, पंथ एवं संप्रदाय जल रहे हैं। इसी मन की ज्वालाओं के कारण महाभारत का विनाशकारी युद्ध हुआ। इसी मन की ज्वाला में हिटलर, मुसोलिनी और नेपोलियन को जलते देखा। इसी मन की ज्वाला में दो-दो विश्वयुद्ध होते देखे। इसी मन की ज्वाला ने बम, एटम बम, अणु बम और उद्जन बम का निर्माण किया, विषाक्त अणु आयुधों का संचय किया।

बाहर की आग इतनी भयंकर नहीं है। वह तो एक बार जल कर कुछ देर में बुझ जाती है। किन्तु मन में लगी यह आग निरन्तर जलाती रहती है। दिन में लड़ते हैं और रात में भी

झगड़ते हैं। जागते हुए संघर्ष करते हैं और सोते हुए भी युद्ध के सपने देखते हैं। नींद में भी बरगलाते रहते हैं, गालियाँ बकते रहते हैं। एक क्षण के लिए भी मन में चैन नहीं, शान्ति नहीं, आराम नहीं। मन की आग बढ़ रही है और हम आत्म-भाव से दूर भटक गए हैं, बहुत दूर पड़ गए हैं। इसी से हमारे मन में जलन है, पीड़ा है, दर्द है, अशान्ति है।

#### क्षमा

वह क्षमा का देवता हमें सजग कर रहा है कि तू अपने आप को पहचान। तुम्हारी



आत्मा अज्जर-अमर है शरीर को कोई जला दे तो क्या? शरीर को जलाने से आत्मा जल नहीं सकती। शरीर का खण्ड -खण्ड करने पर भी आत्मा खण्डित नहीं होती। आग शरीर को जलाती है, पर आत्मा को जलाने की शक्ति उसमें नहीं है।

गज सुकुमार मुनि के मस्तक पर रखी हुई आग प्रतिपल बढ़ रही थी। शरीर के रक्त को चूसने के लिए उसकी सहस्र जिहाएँ लपलपा रही थी। परन्तु भीतरी आग बुझ गई

थी। राग-द्वेष की, काम-क्रोध की आग बुझ चुकी थी। यदि वह जरा-सी टेढ़ी नजर से सोमल को देख लेता, तो वह उसके सामने ठहर नहीं सकता था। परन्तु उस क्षमाश्रमण ने अपनी शक्ति का उपयोग उस पथ भ्रष्ट ब्राह्मण को भस्म करने में नहीं बल्कि कर्म कचरे को जलाने में किया।

गज सुकुमार का जीवन केवल पर्युषण के दिनों में एक दिन सुनने एवं सुनाने के लिए नहीं है। वह क्षमा का अवतार तो हमारे जीवन का साथी है, उसकी स्मृति हर साँस में बनी रहनी चाहिए। कष्ट के समय जब कभी वह याद आता है तो दुखों के रेगिस्तान को पार करने में एक प्रेरक शक्ति मिलती है। विहार कर रहे हैं, सूर्य तप रहा है, गर्मी बढ़ रही है, प्यास सता रही है अब भी गाँव दूर है, कदम उठाने कठिन हो रहे हैं; उस समय वह क्षमा-सागर याद आता है तो उससे लड़खड़ाती हुई जिन्दगी में, दुर्बल मन में अपूर्व शक्ति आ जाती हैं, नई चेतना जाग उठती है। उसका यह ज्योतिर्मय सन्देश हमारे मन में साकार हो उठता है कि जिन्दगी का महत्व दुःख की तप दुपहरी में बढ़ते रहने में ही है, शान्त मन से मार्ग तय करने में है। गीदड़ की तरह रोते-तड़पते एवं आँसू बहाते हुए पलायन करने में क्या धरा है?

एक साधक उल्लास के साथ साधु का बाना धारण करता है। परन्तु जरा-सी दुःख की हवा लगते ही भाग खड़ा होता है; तो वह

हतभागा है। पलायन तो नहीं कर सकता पर अन्दर में रोते हुए जिन्दगी गुजार रहा है; तो उससे अधिक हतभागा कौन होगा? भागना भी हिम्मत का काम है, उसमें भी साहस होना चाहिए। कुछ साधक अन्दर ही अन्दर रोते हैं, पाप-वासना में घूमते रहते हैं, छुप कर दुराचार का सेवन करते हैं, कमजोरियों का पोषण करते हैं, परन्तु पुनः गृहस्थ-जीवन में लौट नहीं पाते। परम्पराओं के कुछ ऐसे दृढ़ बन्धन हैं, कि वे उस और मुड़ने का साहस नहीं कर पाते। इस तरह वे अपने आपको धोखा देते हैं, पतन के गत में गिराते हैं और समाज, संघ एवं धर्म को भी लजाते हैं।

अस्तु, हमने जो प्रतिज्ञाएँ स्वीकार की हैं, चाहे वे साधु-धर्म की हों या श्रावक धर्म की हों, छोटी प्रतिज्ञा हो, तप, नियम, व्रत जो भी स्वीकार किया है उस पथ पर दृढ़ता के साथ गति प्रगति करें। यदि साधना के पथ पर चलते हुए दुःख आ जाए, कष्ट आ जाए, आपत्ति आ जाए तो उस समय मन में क्षमा-श्रमण गज सुकुमार का चिन्तन करो। यदि निष्ठापूर्वक उसे याद करोगे और धैर्य, साहस एवं सहिष्णुता के साथ अपने पथ पर खड़े रहोगे, अपनी प्रतिज्ञा पर खड़े रहोगे तो तुम्हारे अन्दर आलोक का प्रभास्वर चमक उठेगा। तुम्हारी संकल्प शक्ति दृढ़ रही तो तुम्हारा पथ प्रशस्त बनेगा, विपत्ति संपत्ति के रूप में परिवर्तित होकर रहेगी। हाँ, एक बात

अवश्य है कि विकारों पर विजय पाने के लिए, कष्टों को सहने के लिए किसी अच्छे वार या शुभ मुहूर्त की आवश्यकता नहीं, आवश्यकता है आत्मशक्ति को जागृत करने की। संकल्प बल को दृढ़ बनाने की और निर्भय तथा निर्द्वन्द्व बनकर साधना पथ पर चलने की। यदि आप उल्लास के साथ अपने मार्ग पर सतत गतिशील हैं, तो भले ही शनिवार हो या कोई अशुभ वार हो, खराब मुहूर्त हो, क्रूर गृह नक्षत्र हो, आपका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकता।

### धर्म-निष्ठा

**वस्तुतः** मानव मन की दुर्बलताएँ ही मानव को पथ-भ्रष्ट बनाती हैं। सबल आत्मा के लिए कहीं दुःख नहीं, पीड़ा नहीं, वेदना नहीं। मानस में यदि धर्म के प्रति अनन्य निष्ठा है तो दुःख में भी दुःख की अनुभूति नहीं होती। आज का साधक क्यों बड़बड़ाता है, जीवन की पगड़ियों पर एक दो काँटे भी चुभ जाते हैं तो क्यों चौंक उठता है? जरा-जरा सी बात पर भाई-भाई में, समाज एवं संघ में संघर्ष क्यों होता है? इसका अर्थ है कि गज सुकुमार जैसी प्राण-निष्ठा, क्षमा धर्म के प्रति जागृति नहीं हुई।

स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय लोगों के मन में कितना जोश था? बच्चे चल रहे हैं, युवक और वृद्ध चल रहे हैं, बहनें चल रही हैं, गोली ताने लोग सामने खड़े हैं, पर उन्हें कोई परवाह नहीं। पिस्तौल का निशाना बनाते हैं पर

झण्डा हाथ से गिरने नहीं देते। एक का स्थान दूसरा ग्रहण कर लेता है। वहाँ वे किसी लोभ-लालच से नहीं गए। उन्हें मालूम है कि वहाँ फूलों की वर्षा नहीं होगी, गोलियाँ झेलनी होंगी सीने पर। फिर भी वह आजादी का भूखा युवक आगे बढ़ता है मौत का आलिंगन करने कि लिए। तो ऐसी निष्ठा जब तक नहीं होती, तब तक साधक, साधक नहीं हो सकता, वह कुछ नहीं हो सकता।

महाराष्ट्र के मराठा स्वतन्त्रता की लड़ाई लड़ रहे थे। शिवाजी उनके नेता थे। उनकी गाथाएँ, आत्म-बलिदान की कहानियाँ, इतिहास के पन्नों पर लिखी हैं। युद्ध चल रहा है, भूख-प्यास की परवाह नहीं है, पर सेनाओं का संचालन सुचारू रूप से करने के लिए भाग-दौड़ जारी है। कहाँ आराम करें? कहाँ सेज बिछाए? आराम करना है तो वहाँ घोड़े की पीठ है। चलना है तो वही घोड़े की पीठ है, अगर निद्रा का झोंका आया तो भी घोड़े की पीठ है और सोने के लिए भी घोड़े की पीठ है। तो यह अजीब निष्ठा है, चमत्कारिक निष्ठा है। यह निष्ठा जब किसी व्यक्ति में, साधक में, किसी समाज या राष्ट्र में जागृत होती है तो वह

निष्ठा उस व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र की दुनिया ही बदल देती है। वे निष्ठावान् व्यक्ति संसार का नक्शा बदल देते हैं, जीवन का नक्शा बदल देते हैं।

आज की ये संस्थाएँ सूनी सूनी क्यों

नजर आ रही हैं? आज की धार्मिक क्रियाएँ और जीवन की लड़ाई के मोर्चे क्यों सूने हैं? कुछ उस पर लड़ते दिखाई भी दे रहे हैं पर वे लड़खड़ते कदमों से लड़ रहे हैं, सूने मन से लड़ रहे हैं। अगर उनका मन जागृत हो जाए और धर्म की सच्ची प्यास लग जाय तो दृढ़ता आते देर नहीं लगती। गणधर गौतम महावीर के पास पहुँचे तो क्या हुआ? गुरु ने शिष्य का अन्वेषण नहीं किया। शिष्य ही ढूँढ़ता है गुरु को। गुरु, ज्ञान-पिपासु या जिज्ञासु के पास नहीं जाता, जिज्ञासु को ही जाना पड़ता है ज्ञानी के पास, ज्ञान के पास। इन्द्रभूति गौतम माने हुए विद्वानों में से थे, 4400 उनके अनुयायी थे। एक पार्टी पहले जाती है भगवान से शास्त्रार्थ करने के लिए और वह वहीं रह जाती है, वापिस लौटने का नाम नहीं। क्रमशः दूसरी और तीसरी पार्टी भी जाती है पर सब जा रहे हैं लौटता कोई नहीं। स्वयं इन्द्रभूति, ग्यारह गणधर भी जाते हैं पर वे भी भगवान के समीप दीक्षित हो जाते हैं, लौटता कोई नहीं। इसे कहते हैं धर्म-निष्ठा, ज्ञान की सच्ची भूख और प्यास। यह सच्ची प्यास अन्तर में जागृत हो जाए तो काम बने।

उत्तर प्रदेश में एक कहानी प्रचलित है। एक बार सान्ध्य-वेला में सारे पतंगे इकट्ठे हो गए, गाँव के बाहर। उनमें बातचीत हुई या नहीं, यह तो कौन कह सकता है। हुआ क्या? पतंगों के बीच पतंगों के समान पंख वाले दो चार

कीड़े भी आ घुसे। उन्हें देखकर पतंगों में फुसफुस शुरू हो गई। कहने लगे कि ये तो पतंगे मालूम नहीं होते। जब पतंगे नहीं हैं तो पतंगों की सभा में आकर बैठने का इन्हें क्या अधिकार है? आखिरकार सभापति तक वह समस्या पहुँची। सभापति ने आवाज लगाई और कहा कि अब रात हो गई है, अतः जरा गाँव में चलकर देखना चाहिए कि दीपक जले या नहीं? सर्वप्रथम उन कीड़ों से कहा गया जो पतंगों के रूप में आ बैठे थे। सभापति बोला— “जरा जाओ तो सही पता लगाकर आओ कि दीपक जले या नहीं?” वे कीड़े गए और जलते हुए दीपक देखकर लौट आए। सभापति को सूचना दी कि दीपक जल गए। पूछा सभापति ने कहा— “दीपक जल गए? और तुम पतंगे हो?” “हाँ” उत्तर मिला।

दीपक जल जाए और पतंगा प्रज्वलित दीपक को देखकर लौट आए? और फिर वह पतंगा होने का दावा करे? गलत बात है, पतंगे नहीं हो।

कीड़ों ने कहा— ‘नहीं साहब! दीपक जल रहा था, हम देखकर आए हैं, सचमुच जल रहा था।’

‘देखा है तुमने जलते हुए दीपों को?’

‘जी देखा है, अच्छी तरह देखा है।’

और तुम देखकर आ गए हो, इसलिए तुम्हारी परिभाषा यह कह रही है कि तुम सच्चे पतंगे नहीं हो। दीपक जल रहा है, ज्योति जल

रही है, मैदान में पतंगों की भीड़ लग रही है, पर क्या पतंगा प्रकाश को देखकर लौट आएगा? नहीं, वह तो जल पड़ेगा उस पर प्राण न्योछावर कर देगा, अपना अंग-अंग उस पर जला देगा, मौत का आलिंगन करने को कटिबद्ध होकर भी अपने को होम देगा उस दीपक पर, किन्तु वह लौट कर आ नहीं सकता। तुम लौट आए हो, पतंगे हो तुम?

उन्होंने कहा— “तुम दूसरों की भी



परीक्षा करके देखो।”

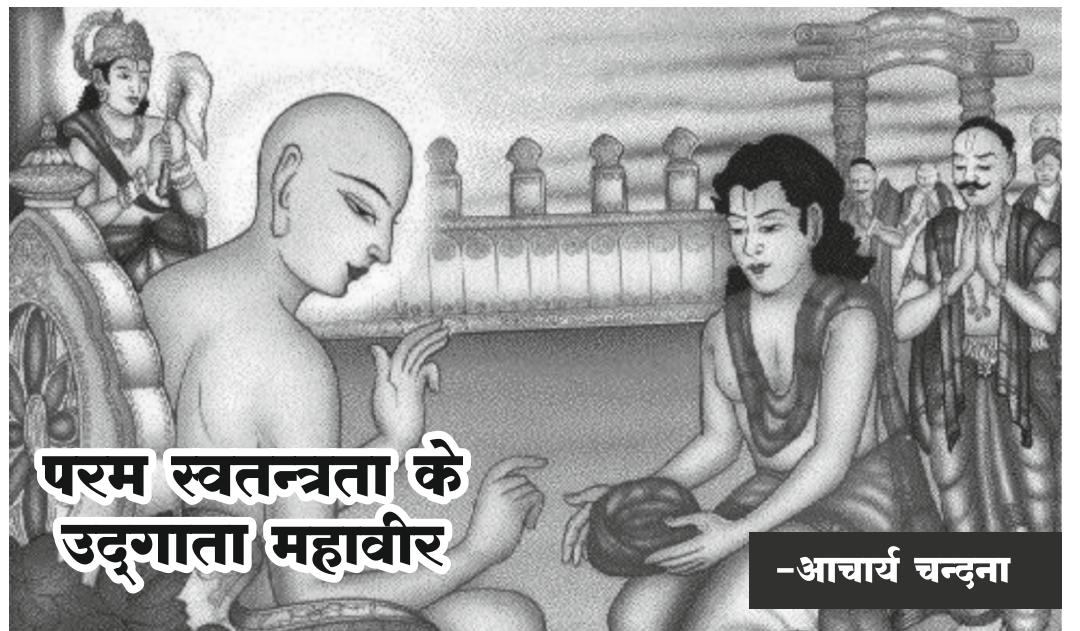
सभापति ने इस बार वास्तविक पतंगों को भेजा। एक पार्टी गई, वह नहीं लौटी, दूसरी गई वह भी नहीं लौटी। वे सब पतंगे दीपक को देखकर सुध-बुध भुला बैठे, सूचना देने के लिए भी लौट न सके। यह भी उन्होंने नहीं सोचा कि चलकर सूचना तो दे दें।

यह एक अलंकार है, रूपक है। यह कहानी हमें प्रेरणा देती है कि धर्म का दीपक, धर्म की ज्योति जल रही है। अहिंसा का, सत्य का, दया-दान और तपस्या का दीप जल रहा है; वह पतंगे नहीं हैं, जो पर्युषण पर्व आने पर

भी इधर-उधर घूम रहे हैं, बड़ी-बड़ी बातें कर रहे हैं, पर सर्वस्व न्योछावर करने को आगे नहीं आ रहे हैं। संसार का विराट् प्रकाश, धर्म के महान् ज्योति जगमगा रही है और धर्म के दीवाने साधक— साधु या श्रावक प्रकाश के मार्ग में आगे नहीं बढ़ रहे हैं तो वे सच्चे पतंगे नहीं हो सकते। यह पर्युषण पर्व अध्यात्म के पतंगों की परीक्षा का समय है।

हाँ, तो जब आप सच्ची निष्ठा से आगे बढ़ेंगे, इस ज्ञान के, तप के और धर्म के जगमगाते हुए पर्व दीप में अपनी सद्भावनाओं की आहुतियों को अर्पण करने के लिए, इस दीप की प्रदक्षिणा करने के लिए और जरा जलने का आनन्द लेने के लिए इसके अन्दर प्रवेश करेंगे, तभी सच्ची शान्ति का अनुभव होगा। अतः जीवन में शक्ति प्राप्त करें, अपने आपको सबल बनाएँ, फिर सिद्धि का द्वार आपके लिए खुला है।

**मनस्वी अपने मन का  
मालिक होता है  
और  
मूर्ख अपने मन का  
गुलाम**



## परम स्वतन्त्रता के उद्घाता महावीर

-आचार्य चन्द्रना

जहाँ हम खड़े हैं, मात्र इतना ही नहीं है यह संसार। हम जहाँ हैं वह तो मात्र स्वल्प-सा खण्ड है पृथ्वी का। अगर हमने इसी खण्ड को अखण्ड ब्रह्माण्ड मान लिया तो यह हमारी बड़ी मूर्खता होगी। संसार विराट है, ब्रह्माण्ड अनन्त है। इसका बोध अगर हमें नहीं है और इसकी स्वीकृति अगर हम नहीं देंगे तो हम क्षुद्र धेरे में बन्द होकर रह जायेंगे।

नदी की धारा जो हमारे गांव में पहुँची है, उसे हम इतनी ही मान ले। यही आग्रह लेकर हम बैठे कि जितनी हमें दृष्टिगोचर हो रही है नदी, बस उतनी ही है वह। न हम उसके उदगम को जानने का प्रयास करेंगे और न उसकी आगे बढ़ती धारा के गन्तव्य को जानने की परवाह करेंगे तो यह कितना बड़ा अज्ञान होगा हमारा?

इसी प्रकार हमारे जीवन को हम केवल शरीर, इन्द्रियाँ और इन्द्रियों के विषय तक ही देखेंगे तो निश्चित ही यह धोर अज्ञान ही होगा। इस दृश्य जगत से बाहर या इन इन्द्रियों के विषयों से परे जिनकी दृष्टि नहीं पहुँची, उन्होंने कहा, पंचभूतात्मक है यह जगत। अर्थात् यह संसार, यह हमारा शरीर, पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु से बना है और इसी में विलीन होने वाला है। न इसके इस पार कुछ है और न उस पार। पांच भूतों से निर्मित यह शरीर और उसी से उद्भूत है चैतन्य। शरीर के नाश के साथ ही चैतन्य भी नष्ट हो जाता है। इस चिन्तन ने 'चार्वाक' दर्शन का रूप लिया।

जब चिन्तन धारा आगे बढ़ी, और आत्मा तक पहुँची तब पाप-पुण्य और कर्म-धर्म का चिन्तन विस्तार पाया। लेकिन ईश्वर कर्तृत्व

इसमें सर्वोपरी रहा। ईश्वर की लीला है कि वह मनुष्य को सुखी या दुःखी बनाता है। वह चाहे तो स्वर्ग में भेज दे और उसकी ही मर्जी है कि तुम्हे नरक की यातना में सड़ना पड़े। जो तुम सोच रहे हो, जो तुम बोल रहे हो और जो तुम कर रहे हो सब का सब ईश्वर तुमसे करा रहा है। वही है सूत्रधार, वही नाच नचाता है।

इस प्रकार चिन्तन की धाराएँ प्रवाहित होती रही। आत्मवाद- अनात्मवाद, नित्यवाद-अनित्यवाद, कर्तृत्ववाद-अकर्तृत्ववाद असंख्य रूपों में यह प्रवाह अप्रतिहत गति से प्रवाहित होकर एक विस्तृत भारतीय दर्शन बना।

हर युग में चिन्तकों ने अपने चिन्तन, मनन एवं मन्थन से इस दृश्य संसार के पार जाकर छिपे रहस्य को खोजने और ढूँढ़ने का प्रयास किया है। और यह कई - कई शताब्दियों तक चलता रहा है जिसे दर्शनशास्त्र कहा जाता है। सृष्टि की आदि, उसका अन्त, उसका कारण आदि विविध विषयों पर विविध दृष्टिकोण बनते रहे और अस्तित्व में आते रहे। विद्वान् अपने चिन्तन का तेल उस ज्योति में डालते रहे। और यह चिन्तन ज्योति ज्योतिष्मान होती रही।

यही कारण है कि इस इलेक्ट्रोनिक युग में भी भारतवर्ष के दर्शन शास्त्र का यह चिन्तन गरिमा मणित है। माना कि दुनिया के विकास की दृष्टि से चाहे वह आर्थिक विकास हो चाहे अन्तरिक्ष युद्ध(स्टारवार) हो या न्युक्लियर वेपन्स हो, हम बहुत पिछड़े हुए हैं। और इस पिछड़ेपन के नाम पर हमने हाथ फैलाए, झोली नहीं हैं।

पसारी। और खेद की बात है कि हमने एक तरह से देश की जनता को किसी की दया पर जीना सिखा दिया। पीड़ा होती है कि यह क्यों हुआ? क्यों हमारे भीतर देश के गौरव को सुरक्षित रखने की हिम्मत, लगन और पुरुषार्थ नहीं जगा?

भारतवर्ष के दार्शनिकों ने इस भूमण्डल पर अपूर्व ज्ञान और चिन्तन की किरणें फैलाई हैं। चिन्तन की ऊँचाई भी असीम है और उसकी गहराई भी असीम है। दूर-दूर तक सोचा, विचारा और मनन किया गया।

भारतवर्ष ने केवल शरीर के लिए ही नहीं सोचा, शरीर के भीतर विद्यमान अदृश्य मन की स्थिति, गति और कार्यों का भी सूक्ष्म विश्लेषण किया और उससे भी आगे गूढ़तम, सूक्ष्मतम तत्व के अस्तित्व तक पहुँचने की कोशिश की। और उनकी उस सूक्ष्म विश्लेषण शक्ति ने परमात्मा तक का द्वार खटखटाया। सूक्ष्म, सूक्ष्मतर एवं सूक्ष्मतम होते चले गये, भारतवर्ष के वे महान तत्त्वचिन्तक, महा महामनीषी तीर्थकर और मुनि, सन्त और ज्ञानी। यह हमारे लिए बड़े गौरव का विषय है।

यह बात जरूर है कि रोटी, कपड़ा, मकान की दृष्टि से विकास नहीं हुआ। इसलिए हम बाहर में पिछड़ते गये। लेकिन कुछ भी हो, बाहर हम पिछड़ते रहे हैं यह सत्य है, बाहर हम गुलाम रहे यह भी वास्तविकता है। परन्तु इसके बाद भी हमारा जो आध्यात्मिक चिन्तन है, उसकी ऊँचाई और उसके शिखर दुनिया के पास नहीं हैं।

रोटी प्राप्त करना बहुत कष्ट साध्य नहीं है। मकान खड़े कर लेना कोई खास बात नहीं है। परमाणु की शक्ति से दुनिया में विघ्वंस कर देना बहुत कठिन नहीं है, एक पागल व्यक्ति भी कर लेगा। इस बाह्य चकाचौंध के लिए तो बस हमारे संकल्प जग आए, उस ओर हम कदम बढ़ा दे, तो असम्भव नहीं है कुछ भी।

आज हिन्दुस्तान में बड़े-बड़े औद्योगिक प्रतिष्ठान जो थोड़ी सी पुंजी में चल रहे थे, वे अब विस्तार पाकर सामाजिक एवं आर्थिक प्रगति के आधार स्वरूप बन गये हैं। यह बाह्य प्रगति तो मनुष्य थोड़ी- सी बुद्धि और थोड़ी सी मेहनत से प्राप्त कर लेता है।

हम देखते हैं एक पीढ़ी बहुत साधारण स्थिति में थी और अगली पीढ़ी विशिष्ट ही नहीं विशिष्टतम बन गयी है। पिता सैकड़ों में व्यापार करते थे, बेटा करोड़ों में खेल रहा है। एक ही पीढ़ी में इतना अंतर है।

औद्योगिक, आर्थिक एवं बाह्य प्रगति तो एक व्यक्ति अगर अपनी बुद्धि और शक्ति को उस दिशा में लगा दे तो मुश्किल नहीं है।

लेकिन आध्यात्मिक दृष्टि से भारतवर्ष ने जो शिखर छुए हैं, उसमें सैकड़ों पीढ़ियाँ लगी हैं। जब शताब्दियों तक मेहनत की जाती है तब सत्य हाथ लगता है। दर्शनशास्त्र की जो सूक्ष्मताएँ हैं, उन्हें आसानी से नहीं प्राप्त किया जा सकता है। ऐसे आध्यात्मिक सत्य का अद्भुत खजाना हमारे पूर्वजों से हमें मिला है। ऐसे इस खजाने के धन से इस जन्म की नहीं,

इससे अगले जन्म की और अनन्त - अनन्त जन्मों की दरिद्रता दूर हो सकती है। भारतवर्ष ने केवल शरीर को ही जीवन नहीं माना, शरीर से परे तक उन्होंने देखा।

शरीर को ही जीवन मानने वाले तो पशु भी हैं। पशु में और इन्सान में क्या फर्क है? कहा है एक आचार्य ने-

**आहार निद्रा भय मैथुनं च,  
सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणां।  
धर्मो हि एको अधिको विशेषो,  
धर्मेण हीना पशुभि समानाऽ।**

पशु को भी भूख लगती है, वह भी खोज में चल पड़ता है। परिवार की समझ उसे भी है। उनकी भी अपनी दुनिया है।

एक बार हम खरगोश का फार्म हाउस देखने गये थे। देखकर मैं विचार करती रह गई, दुःखी होती रही कि मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए कितनी दुर्दशा करता है पशु की! क्या क्या नहीं करता है वह इस मूक निरपराध भोले जानवर के साथ! लेकिन वहाँ एक बात जो मैंने देखी, चकित रह गई मैं देखकर कि एक खरगोश जो मां बनने वाली थी, वह अपने शरीर के बाल नोंच-नोंच कर नरम गद्दा बना रही थी। पूछने पर बताया वहाँ के व्यक्ति ने कि आने वाले उस बच्चे को धरती का कठोर स्पर्श बरदाश्त न करना पड़े इसलिए वह ऐसा करती है।

एक छोटी चिड़ियाँ भी अपने बच्चे के लिए घोसला बनाती हैं। मनुष्य बार-बार तोड़ भी दे, उजाड़ भी दे। तब भी वह अपनी कोशिश

नहीं छोड़ती। बच्चे के लिए जो वात्सल्य और जो सेवा पक्षी करता है, मनुष्य भी नहीं कर सकता। और करता भी है तो इस अपेक्षा से कि बड़ा होकर वह बुढ़ापे में सेवा देगा।

पशु और पक्षी शरीर के स्तर पर जीते हैं। लेकिन मनुष्य इसलिए श्रेष्ठ है कि वह अपने जीवन को शरीर के स्तर से ऊपर उठकर देखता है। वह मनन करता है। मनन करने के कारण ही उसे मनुष्य कहा जाता है- 'मननात् मनुष्यः' धरती पर रहकर भी वह आकाश की ऊँचाइयों को देख सकता है, इसलिए वह श्रेष्ठ है। वह केवल शरीर और परिवार के लिए नहीं जीता, वह शरीर से ऊपर ऊठकर आत्मा और परमात्मा तक की यात्रा कर सकता है। वह इसलिए भी श्रेष्ठ है कि वह अपने सुख को छोड़कर दूसरों को सुखी बनाता है। दूसरों के सुख के लिए प्रयास करता है।

अद्भुत है यह भारतवर्ष का चिन्तन। यह चिन्तन जीवन के क्षणभंगुर सुख से मानव को बाहर निकाल कर वहाँ पहुँचने का मार्ग बता देता है जहाँ है अक्षय और अनन्त सुख का अखूट खजाना। दर्शन का मुख्य विषय कर्म, पुनर्जन्म, मोक्ष तथा मोक्ष के उपाय रहा है। भौतिकवादी दर्शन तत्व परक (पदार्थ विषयक) चिन्तन करते हैं।

लेकिन महावीर का चिन्तन मुख्यतः आत्मलाभ, आत्मा द्वारा स्वरूप लाभ परक रहा है। और आध्यात्मिक परिणति स्वयं उसके अपने आन्तरिक विकास में है। अपने से भिन्न किसी

परमात्मा में विलीन होने में नहीं।

महावीर मानवतावादी हैं उन्होंने कहा "हे मानव! अपने भाग्य के विधाता तुम स्वयं हो। तुम्हारे भाग्य की डोर किसी और के हाथ में नहीं हैं। कोई ऐसा ईश्वर नहीं बैठा हुआ है जो तुम्हें स्वर्ग दे दे या नरक में फेंक दे। महावीर ने ईश्वर को अपदस्थ कर दिया। ईश्वर कर्तृत्व की बद्धमूल धारणा को मोड़ दिया। उन्होंने ईश्वर की गुलामी से मुक्त करके मनुष्य को परम स्वतन्त्रता दे दी। उन्होंने कहा न तो तुम ईश्वर के हाथ की कठपुतली हो, न तुम गुलाम हो और न तुम कमजोर दीन-हीन किसी की दया पर जीने वाले भिखारी हो। तुम स्वयं हो परमात्मा। तुम चाहो तो सर्वोच्च पद को भी पा सकते हो। और यह तुम्हारी अपनी मर्जी है कि तुम संसार के अंधेरे में ठोकरे खा रहे हो।

जिस क्षण जाग जाओगे, अपने भीतर की शक्ति को पहचान लोगे, उसी क्षण बन्धन तोड़कर परम पद को पा लोगे।"

## क्षण

**महक उठी आत्म की बगिया  
चहक उठी ज्ञानी की गाथा  
कुहुक उठी करूणा की कोयल  
धन्य-धन्य है मेरा यह क्षण  
अंकित कर लूँ मन कागज पर।**

-नंदिनी



आज का दिन, आज का सूरज हमारे प्राचीन परंपरा के इतिहास की एक पावन स्मृति लेकर आया है। वह स्मृति हमारी अजर-अमर है। वह भूत को भी गौरवान्वित करती आयी है, वर्तमान को गौरवान्वित कर रही है और भविष्य को भी गौरवशाली बना सकती है। यह स्मृति है विजयादशमी की।

दशमी तो बस एक तिथि है। यह तो काल के प्रवाह का बहता पानी है। किन्तु एक बात है महत्त्वपूर्ण कि हमारे पूर्वजों ने इतिहास के कुछ क्षणों को ऐसे पकड़े रखा कि उसे छोड़ नहीं। भले ही कुछ विकृतियाँ उसमें आयी किन्तु उसके मूल रूप को पकड़े रखा।

विजयादशमी यह विजय का पर्व है। जीवन में क्या हम पराजय के शिकार होते जाय? ठोकरें खाते जाय? लुढ़कते जाय? और इसी तरह रोते-बिलखते जाय? आंसू बहाते जाय? क्या यह जीवन है? ऐसे तो न कोई व्यक्ति जिन्दा रह सकता है, न परिवार, न राष्ट्र

और न समाज।

अतः भारत के महान ऋषियों के उद्गार है— “मा रोदि धैर्यमावह।” मत रोओ, तुम रोने के लिए नहीं हो। तुम रोओगे, आस-पास के दूसरे लोगों को भी रुलाओगे। इस तरह सारा संसार रोता चला जायेगा। धैर्य धारण करो, वीर बनो। जीवन की समस्याओं के साथ संघर्ष करो। उनपर विजय पाने के लिए अपनी सारी शक्ति लगा दो, सबकुछ अर्पित कर दो। कालक्षेप हो सकता है, देर हो सकती है, देर होने से मन को क्षीण मत करो, मन को नीचे न गिरने दो। बस अपनी भुजा उठाओ। मन से, बुद्धि से, श्रद्धा से धैर्य धारण करो और वह धैर्य तुम्हें धारण करेगा।

यह एक दृष्टि है भारत की। इसी दृष्टि से हमारे पर्व है। कोई किसी नाम से तो कोई किसी नाम से। यह विजय की संस्कृति का पर्व है। इसका संदेश है— पराजित मत रहो। चलते रहो जबतक तुम अपने लक्ष्य पर न पहुँचो। यह

संदेश बाहरी जीवन के लिए भी एवं आंतरिक जीवन के लिए भी है। विकास के पथ पर निरन्तर संघर्षरत रहो। उद्यानं ते नावयानं। उद्माने ऊपर एक से दूसरी सीढ़ी चढ़ते जाओ। संभलकर रहना। कहीं फिसल न जाय पैर। दृष्टि को ऊपर रखो। जो दृष्टि को ऊपर रखेगा उसकी सृष्टि भी ऊँची, ऊर्ध्वमुखी होगी।

नवरात्रि में शक्तिपूजा होती है। नव दिनों तक पूजा की परम्परा है। अब शक्तिपूजा ने विकृत रूप ले लिया है। विचार शून्यता जब आ जाती है तो उस पर्व का मूल प्राण छूट जाता है, आत्मा रहित केवल शरीर रह जाता है। बाहर के रूप को पकड़े रहते हैं। प्राण निकल जाने पर शरीर मुर्दा हो जाता है। उसे सिवाय गाड़ने, जलाने के दूसरी गति नहीं होती। मुर्दे को घर में नहीं रखा जाता।

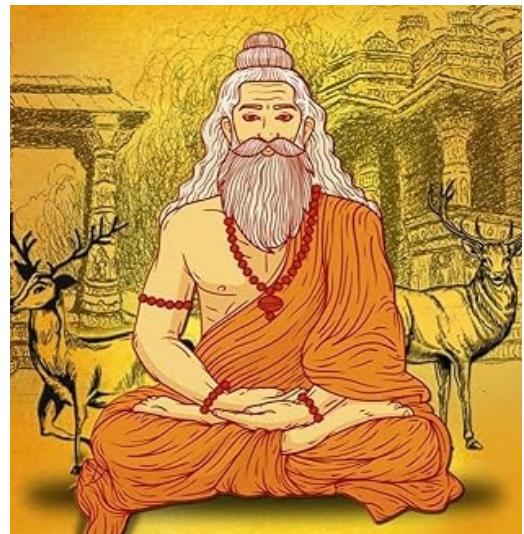
शक्ति पूजा के पर्व की यही स्थिति हो गयी है। इस पर्व में बेचारे हजारों बकरें कट जाते हैं। हजारों पशुओं का खून बह जाता है। और लोग सोचते हैं कि बहुत बड़ी शक्ति पायी हमने। बकरे को काट-काट कर क्या शक्ति पायी? उस देवी की भी क्या शक्ति रही इसमें? क्या दिव्यता रही?

शक्ति का तो अर्थ है कि हमारे अन्दर जो दुर्बलताएँ हैं उनपर हम विजय प्राप्त करें। मानसिक दुर्बलताएँ, हमारी परंपरा की दुर्बलता हैं, हम लकीर के फकीर हो गये हैं, मूल को खो बैठे हैं, अपनी शक्ति खो बैठे हैं फिर

भिखारी की तरह हाथ फैला रहे हैं। देवी-देवता के आगे भीख मांगते फिर रहे हैं और इस भीख के लिए बेचारे बकरे की बली चढ़ाते हैं।

कितना गहन अंधेरा है, कैसी विचित्र विकृति है। ये दुर्बलता के क्षण है। आमतौर पर दुर्बल व्यक्ति परम्परा के गुलाम होते हैं। जब कोई समाज, राष्ट्र, धर्म दुर्बल होता है तो नये सृजन की, उत्थान और विकास की बौद्धिक क्षमता नहीं रह पाती। वह भूतकाल की दुहाईयाँ देने लगता है— ‘ऐसा था, ऐसा कहा था, ऐसा हुआ था’ वह ‘था’ में घुस जाता है। ‘है’ में नहीं रहता। और नहीं सोच पाता कि क्या होना चाहिए।

भारत के ऋषियों ने बराबर हमें जागृत किया है कि पूर्वजों का सम्मान करना बहुत अच्छा है लेकिन उन्होंने जो किया वह उनके देशकाल परिस्थिति के अनुरूप किया। तुम्हें जो करना है तुम्हारे देशकाल परिस्थिति के अनुसार



करना है। क्योंकि तुम्हें अपने वर्तमान में जीवन जीना है। तुम्हारा देश-काल अलग है, परिस्थिति अलग है। इन स्थितियों में तुम्हें नये सिरे से निर्माण करना होगा। एक महत्वपूर्ण बात कही है आचार्य ने—

**यस्यास्ति सर्वत्र गतिः स कस्मात्,  
स्वदेशरागेन नहि याति खेदम्।  
तातस्य कुपोयमिति ब्रुवाणा,  
क्षारं जलं का पुरुषाः पिबन्ति॥**

जिसमें स्वयं कुछ विकास करने की शक्ति नहीं है वह अपने घरोंदे में पड़ा-पड़ा रोता रहता है। अगर कोई कहे उसे कि छोड़ घरोंदा निकल बाहर तो कहता है— “कैसे छोड़ दूँ? यह तो मेरे बाप दादों का है। उन बड़ों के नाम पर उस गिरते पड़ते घर में जिसकी एक-एक ईट खिसकतीं जा रही हो उसे पकड़े रहता है छोड़ता नहीं।

बाप ने दूर से पानी लाने में दिक्कत होती थी तो घर में कुंआ बनाया, दुर्भाग्य से उसका जल खारा निकल आया। अब उसकी सन्तान खारा पानी पीती है, बीमार पड़ती है। परेशान होती है तो किसी ने कहा कि गांव के बाहर मीठे पानी का कुंआ है फिर क्यों खारा पानी पीते हो? तो जबाब मिलता है खारा है तो क्या हुआ, है तो हमारे पिताजी का। हमारे पूर्वजों का है इसलिए हम इसी का पानी पीयेंगे।

आचार्य कहते हैं— जो कायर नर है,

जिनमें कर्म शक्ति नहीं है वे घेरे में बंधे दुःखी होते रहते हैं। वे सीमोल्लंघन करके विजय यात्रा नहीं कर पाते। गांव की सीमा पार कर मीठे जल तक नहीं पहुँच पाते।

आज का दिन सीमातिक्रमण का दिन है। जिन सीमाओं को हमने बना रखा है उन्हें लांघो और आगे बढ़ो। विस्तार पाओ। रेखाओं से आगे बढ़ो। इस प्रकार पुरानी पीढ़ी से नयी पीढ़ी को आगे बढ़ना है।

नौ दिनों तक शक्ति पूजा का अर्थ है शक्ति का संग्रह करो। संसार में वही जिन्दा रहेगा जो सशक्त होगा। जीवित रहने का



अधिकार भी उसे है जो समर्थ है। शक्ति ही जीवन है।

आचार्य शंकर ने सौन्दर्य लहरी में कहा— “शिवः शक्त्यायुक्तः” शक्ति से युक्त है तो वह शिव है अन्यथा शव है। नागरी लिपि

में श लिखकर इकार लगाते हैं वह इकार की

मात्रा शक्ति की प्रतीक है। अगर वह मात्रा हट जाय तो शव रह जाता है। मुड़दा। जीवन हीन। जो मुड़दे के पास रहेगा वह भी मुड़ता बन जायेगा। कब्र में सोनेवालों के पास कोई सोये तो वह भी कब्र में सोया रह जायेगा। अतः शक्ति चाहिए और शक्ति के साथ चाहिए विवेक।

**“ज्ञान क्रियाभ्यां मोक्षः”** ज्ञान का प्रकाश चाहिए ज्ञान के साथ क्रिया शक्ति चाहिए। चिन्तन के प्रकाश में ही क्रिया/कर्मशक्ति हो तभी मुक्ति प्राप्त होती है। ज्ञान के प्रकाश में चलना है। प्रकाश ही मार्ग है। शक्ति ही मार्ग है। ज्ञान का प्रकाश साथ में है तो मार्ग पूछने की जरूरत नहीं है। केशवराज कहते हैं जिधर तुम निकल चलोगे वही पथ बनता जायेगा। पगडण्डियाँ कैसे बनती हैं। पद्धति- पैर पड़ते गये, मार्ग बनता गया। पद से आहत भूमि एक रूप ले लेती है जिसे पद्धति-पगडण्डी कहते हैं।

जैन रामायण का कवि कहता है—  
“कायर नर ने सब सोचनो रे,  
बलिया उज्जड़ बाटा”

कायर सोचता रहता है— किधर से जाना, कौन रास्ता, कैसा रास्ता। लेकिन जो बलवान है वह तो बस चल पड़ता है। जिधर उसके कदम पड़ते चले, रास्ता बनता गया।

महावीर ऐसे ही चले, महापुरुष ऐसे ही चले। विजय तो शक्ति में निहित है। और

शक्ति सात्त्विक साहस तथा सात्त्विक धैर्य में रही हुई है। अगर शिवत्व पाना है तो शक्ति प्रथम अपेक्षित है।

एक व्यक्ति शेर सुना रहा था—

संसार क्यामत के दहाने पर खड़ा है। रावण तो हजारों है, पर राम कहाँ है?

संसार विनाश के किनारे खड़ा है और संसार में तो बस रावण ही रावण है, राम कहाँ है। जब कई बार दुहराया उसने शेर तो मैंने



कहा— बताऊं राम कहाँ है? बोला बताओ तब मैंने कहा— तू है राम। उठ जाग। तू स्वयं राम है।

रावणों से लड़ने के लिए राम कोई आकाश से उतर कर नहीं आयेगा। तुझे राम बनना है। तू अगर अपने विवेक को जागृत करले तो तू ही राम है। राम को और कहाँ ढूँढ़ता है? राम को निमन्त्रण नहीं देना पड़ेगा कि राम आओ, आओ। महावीर को भी निमन्त्रण देते हैं लोग। परन्तु यह नहीं सोचते लोग कि उन्होंने जो कुछ कहा है उस दृष्टि से तुम्हें ही स्वयं महावीर बनकर उठना है।

यही विजयादशमी का अर्थ है। पर



दुर्भाग्य है कि विस्तार पाने की बजाय हम बौने होते चले गये। हम निरन्तर हीन-क्षीण होते जा रहे हैं। क्योंकि हमारे विचारों में एक बात घर कर गई है कि कलियुग है। किसी बुराई की बात सुनते हैं तो हर व्यक्ति की जबान पर होता है—‘अरे भाई! कलियुग आ गया।’ इसका अर्थ है दुनिया भर के पापाचारों, अत्याचारों, बुराईयों को कलियुग के नाम पर स्वीकृति दे दी हमने। जिस देश, समाज या धर्म परम्परा की यह मनोवृत्ति बन जाती है, वहाँ विकास नहीं हो सकता। वहाँ विचार छोटे होते चले जाते हैं, वहाँ सिकुड़ना ही बदा होता है।

कलियुग का वर्णन करते हुए कहा है कि आदमी बौने होते-होते मुंड हाथ के हो जायेंगे। बित्तेभर- बिलस्तिया हो जायेंगे। बड़ा मजेदार वर्णन है कलियुग का, हमारे ह्यस का। शरीर का बौना होना अलग चीज है लेकिन जो लोग विचार से बौने हो जाते हैं साहस और उत्साह से बौने हो जाते हैं वे क्या कर सकेंगे? कुछ नहीं कर पायेंगे।

अतः आवश्यक है कि हम अपने

उत्साह और पराक्रम को आगे बढ़ायें। महावीर कहते हैं कि केवल वचनवीर मत बनो—“वायावीरियमेत्तेण समासासन्ति अप्पयं।” कर्मवीर बनो। कुछ काम करो, सत्कर्म करो। पूर्वजों के गुणगान करो जरुर लेकिन उससे कुछ प्रकाश लो। जो तुम्हारे जीवन के लिए संदेश दिये गये थे उनमें से देशकाल के लिए जो थे उन्हें छांटकर जो शाश्वत संदेश है, उन्हें अपने जीवन में उतारो। शाश्वत के लिए न कोई देश होता है न काल। “हर नर नारायण है” यह शाश्वत संदेश है। कुछ छापा तिलक, पूजा-माला शुभ दिशा, कपड़े के रंग-ढंग इत्यादि देश कालानुसार होते हैं। लेकिन “विकारों के विजेता बनो।” यह शाश्वत संदेश है। विजेता याने जिन। विजेता ही जिन और बुद्ध बनेगा। खुद जिन बनो और दूसरों को जिन बनने का संदेश दो। जिनां प्रथम हैं और तदनन्तर है जावयाण। और मुत्ताणं मोयगाणं खुद मुक्त होते हैं और फिर दूसरों को मुक्ति का संदेश देते हैं। कहते हैं समस्याओं को, बन्धनों को तोड़कर फेंक दो।

काल का कोई अर्थ नहीं है कि कलियुग है। अब तो कुछ और होने को नहीं है। रोने को मत बैठो। मैं पूछता हूँ— क्या सारा कलियुग भारत पर ही आ गया और भी तो देश है। कलियुग ने आकर हमारे यहाँ ही ठोकर लगाई। दूसरी जगह रहने को न मिली? दूसरी जगह सत्युग आ गया। कैसे हुआ ऐसा? सारा

भूमण्डल तो एक ही तरह का है। कुछ नहीं विचारों का कलयुग है और विचारों का ही सत्युग है। जब विचारों का कलयुग आता है तब पतन शुरू होता है। और विचारों में सत्युग आता है तो विकास होना शुरू होता है।

अतः शक्ति का महत्व समझे। शक्ति है ज्ञान। शक्ति है विवेक और शक्ति है कर्म। शक्ति का एक रूप नहीं वह तो सहस्रभुजा देवी है। सहस्र माने हजार-अनन्त। सहस्र का अर्थ अनन्त भी है। उन सारी शक्तियों को जागृत करना है। जब वे शक्तियाँ जागृत होंगी तो विजय द्वार पर खड़ी है। हम अपनी शक्ति को, स्वत्व को भूल गये हैं और अपेक्षा करते हैं दूसरों से कि दूसरे यह नहीं करते, वह नहीं

करते। अपने आप से पूछो कि स्वयं क्या करते हो? यह जागरण जब आयेगा तब शक्तिपूजा सार्थक होगी। तब हमारे विजय पर्व सार्थक होंगे। यह विजेता की भूमि है, जिन की भूमि है। यहाँ का संदेश है— अपने विकारों पर, दुर्बलता पर, दीनता पर विजय पाओ उठो जागो। महापुरुषों के संदेश लेकर आगे बढ़ो। तुम शिखरों पर चढ़ने के लिए हो। घाटियों में पड़े रहने के लिए नहीं हो। रोने के लिए नहीं हो। यह उन महापुरुषों का संदेश है जिन्होंने देशकाल परिस्थिति के अनुसार जीर्णशीर्ण अनुपयोगी को अलग कर जीवन में अपना विकास किया तथा दूसरों की समस्याओं को पार करके विकास का संदेश दिया।

## राज्य की सुरक्षा

राजा रात को महल की सुरक्षा-व्यवस्था देखने निकले। देखा कि खजाने के कक्ष में से रोशनी आ रही है। राजा ने जाकर देखा तो वहाँ खजांची बैठे काम कर रहे थे। राजा ने कारण पूछा तो खजांची बोले—“हुजूर! हिसाब लगा रहा हूँ, कुछ भूल हो गई है।”

राजा ने पूछा, “कितना कम पड़ गया है?” खजांची ने उत्तर दिया, “महाराज! कम नहीं, ज्यादा हो गया है।” राजा बोले, “तो चिन्ता की क्या बात है? सुबह कर लेना।”

खजांची बोले, “नहीं, महाराज! पता नहीं, किस गरीब का पैसा हमारे खजाने में आ गया होगा। उसको कष्ट न हो, इसलिए रात में ही हिसाब सही करने बैठ गया।”

राजा गदगद स्वर में बोल उठे, “जिस राज्य में आपके जैसा कर्तव्यपरायण खजांची हों तो वहाँ की प्रजा और राजा, दोनों की सुरक्षा कभी कम नहीं हो सकती।”



धर्म कर्म है, वक्तव्य नहीं। और धर्म तभी कर्म बनता है जब वह आत्मा से होता है। व्यक्ति जैसा होता है, उसका कृत्य वैसा होता है। पहले वह होता है तब वह करता है।

पहले फूल होता है तब सौरभ बिखरती है। फूलों की खेती की तरह आत्मा में भी फूलों की खेती करनी होती है। आत्मा में फूलों को खिलाने के लिए पर्वतों पर जाना जरूरी नहीं है। जहाँ आप हैं वहाँ पर फूल उगाये जा सकते हैं। स्वयं का आन्तरिक एकान्त ही अरण्य है, पर्वत है। उसी पूर्ण एकान्त में सत्य के दर्शन हो सकते हैं। जो भी श्रेष्ठ है, वह उन्हीं को मिलता है, जो अकेले होने का साहस रखते हैं। जब शान्त और एकान्त होता है तभी बीज अंकुरित होते हैं। चित्त जब सब पकड़ छोड़ देता है, जब नाम और रूप के बन्धन तोड़ देता है तब जो शेष रहता है वही व्यक्ति का वास्तविक होना है। उस समय व्यक्ति अकेला होता है और एकान्त में होता है। तब जो जाना जाता है वह इस लोक और इस जगत् का नहीं होता। जब धर्म के फूल खिलते हैं, तब परमात्मा की सुवास फैलती है।

इन्हीं क्षणों में शान्ति, सौन्दर्य और सत्य जाना जाता है, जो जीवन के विभिन्न तलों पर जीने की शक्ति देता है। तब व्यक्ति जगत् में रहते हुए भी जगत् से परे हो जाता है। जल में रहते हुए भी जल से निर्लिप्त जलकमलवत् हो जाता है। जीवन में रहते हुए भी जीवनमुक्त, देह में रहते हुए भी देहमुक्त, देहातीत हो जाता है।

इस अनुभूति में ही जीवन की सिद्धि एवं धर्म की उपलब्धि है।

-साध्वी शुभम्

## तपस्वी साध्वीश्री सुमेधाजी का अभिनन्दन

तपस्वी साध्वी श्री सुमेधाजी का यह चौथा वर्षीतप, एकान्तर तप सुखसाता पूर्वक चल रहा है। तपाराधना के उनके उत्कृष्ट भाव वस्तुतः आदर्शरूप है, प्रेरणादायक है। तप की आराधना तो है ही बेजोड़ साथ ही ज्ञान की भी आराधना-स्वाध्याय तथा पठन-पाठन भी वे अप्रमत्त होकर करती हैं। नियमित शास्त्र स्वाध्याय करती है। और हंसते-मुस्कुराते प्रसन्नभावों से सत्कर्मों में भी वे निरन्तर संलग्न रहती हैं।

उनके इन उच्चभावों की अनुमोदना करने हेतु वीरायतन साध्वीसंघ अभिनन्दन पत्र देकर उनके तप के प्रति प्रमोदभाव अभिव्यक्त करता है।



**अभिनन्दन**

तप: साधना और कर्मशीलता की अनुपम प्रतिपूर्ति साध्वीश्री सुमेधाजी!

अभिनन्दन! अभिवादन!!

पूर्व गुरुदेव गद्यसंत उपाध्याय श्री अमरपूर्ण जी नामांग और प्रजा, पुष्पार्थ एवं गावन प्रणाली की महान्योगीत श्रद्धेय आचार्यांश्री चन्द्रनाश्रीजी 'ताई माँ' जीवन की सर्वांगीन समरक, सम्भाना के प्रबोधन रहे हैं। उनका जीवन तपःतुः तुः उनकी कृपा, आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन से 'ताण' च दंसण च, चरित्रं च तत्वो तत्वा' स्वरूप जिनेन्द्र मार्ग पर आप प्रगति कर रही हो। अभिनन्दन है आपका। आहोपाद एवं भव्याभाव अभिवक्त हैं।

प्रप्रम तीर्थेवर भावानन्दन ऋषेन्द्रेवत के वर्षीतप की यज्ञातिर्तम परम्परा चिरार्थित काल से अक्षुण्ण चरी आ रही है। लक्षात्मक तपःसाधनों ने इसे निरन्तर प्रत्याहित रखा है। तपामृति श्री रंगाजी महाराज, श्रद्धेय आचार्यांश्री ताई माँ, डॉ. साध्वी श्री चतुराजी, यववाचारी श्री शुभमजी की वर्षीतप समारापना जिसमें समाहित है उस तपःप्रवाह को आपने आगे बढ़ाया है। आपका यह तृतीय वर्षीत 2023 के अशय तुरीया को समग्र होने जा रहा है। प्रस्तुत प्रसंग पर संघ आपका हार्दिक अभिनन्दन करते हुए अल्पाधिक प्रसन्नता का अभिवक्त कर रहा है।

23 तीर्थकां की तीर्थधूमि, सहस्राधिक तपस्वियों की तपोभूमि विहार में जम लेकर हरनीत के गहरासी अपने सिसाश्री देवेन्द्र प्रसादजी का नाम रोगन करते हुए वीरायतन में दीक्षा ग्रहण की। जान की आधाना के साथ आचार्यांश्री ताई माँ की असीम कृपा प्राप्त करके तपाराधना कर रही ही योग्यता में आकर साध्वीश्री शिलापौरीजी के समर्थ मार्गदर्शन में चढ़ी जिम्मेदारी का कुरुक्षेत्र के साथ निवेदण कर रही हो।

संघ आपसे गौरवान्वित हो रहा है। समग्र संघ एवं वीरायतन परिवार आपका एवं आपके तपामृति का तथा आपके महत्त्वपूर्ण योगदान का वास्तव अभिनन्दन करता है।

श्रद्धेय आचार्यांश्रीजी के अमरपूर्ण सात्रित्य में उनकी असीम कृपा से आपकी श्रेष्ठतम तपः साधना अक्षुण्ण चरी रहे। आपका स्वाध्य, सुखसाता एवं प्रगोद्धभाव चिरन्तन, नित्यतृतन रहे।

संघ परमात्मा के चरणों में प्रार्थनालीन है। पुनः अल्पाधिक प्रसन्नता के साथ हार्दिक अभिनन्दन! शुभांगसा एवं प्रार्थना के प्रशस्त भावों में...

सम्मोहित संघ



## निर्वाणभूमि पावापुरी के बच्चों को शिक्षा एवं संस्कार

**एक ही परिसर में है दो-दो स्कूल बिल्डिंग—  
तीर्थकर महावीर विद्या मंदिर एवं हरिकेशीय विद्यालय**

मैंने पावापुरी के स्कूल के विषय में सुना था लेकिन जितना सुना था प्रत्यक्ष में उससे कई गुणा अधिक पाकर मैं चकित और अवाक् हूँ। चाहती हूँ कि मैं भी फूल नहीं तो फूल की पंखुड़ी ही सही, अर्पण करूँ।

सोच-सोचकर भी नहीं सोच पाती उस अपार करुणा को जो पद्मश्री डॉ. आचार्य चन्दनाश्रीजी पूज्य ताई मां ने महामेघ बनकर बरसायी है।

उस समय में जब पावापुरी में कोई शिक्षा व्यवस्था वहाँ के बच्चों को प्राप्त नहीं थी और न शिक्षा के महत्व का बोध था। ऐसे समय में घर-घर जाकर बच्चे-बड़े, स्त्री-पुरुष सबके साथ आत्मीय सम्बन्ध स्थापित करके उन्हें

शिक्षा के महत्व को समझा कर स्कूल प्रारम्भ किया जिसके लिए विशाल बिल्डिंग का निर्माण किया और प्रभु के ही नाम से प्रभु को समर्पित किया— “तीर्थकर महावीर विद्या मंदिर”।

लेकिन जब पूज्य ताई माँ ने देखा कि इन उच्चवर्गीय बच्चों के साथ वे बच्चे नहीं आ पा रहे हैं जो अत्यन्त निम्नतम जाति के हैं (जिसे प्राचीन ग्रन्थों में चाण्डाल जाति कहा है और जिस जाति के तपस्वी मुनि थे हरिकेशी। जिनकी तप की प्रशंसा स्वयं भगवान महावीर ने अपनी अन्तिम देशना (उत्तराध्ययन) में की है।) उस जाति के भी घरों में जाकर उनका संकोच दूर करके उनके बच्चों के लिए स्कूल

भवन निर्मित किया जिसका नाम रखा ‘हरिकेशीय विद्यालय’, जिसमें सम्पूर्ण शिक्षा निःशुल्क है।

इसी हरिकेशीय स्कूल के कुछ बच्चों को मैं गोद लेना चाहती हूँ। अतः कई बार मेरा यहाँ आना हो रहा है। राजगृह से पावापुरी आने की सुविधा मुझे मिल जाती है और बच्चों के बीच आकर मैं खूब आनन्द महसूस करती हूँ। और जो पूज्य ताई माँ ने हर बच्चे को संस्कार देने का प्रयास किया है उसमें मैं भी अपना योगदान देने का प्रयत्न करती हूँ। शिक्षा के साथ मानवता के संस्कार, प्रकृति और पर्यावरण के प्रति सजगता, जो भी बताया जाता है बच्चे उसे ग्रहण करते हैं। स्वयं के सुख-दुःख के संवेदन की ही तरह दूसरे जीवों के सुख-दुःख की संवेदना की अनुभूति को वे जानने और अनुभव करने लगे हैं। अतः मांसाहार से वे दूर रहते हैं।

खेलते-कूदते खुशी-खुशी से वे वृक्षारोपन करते हैं। उन्हें पानी देते हैं और उनका संरक्षण करना वे अपना कर्तव्य समझते हैं।

मैंने जिन बच्चों को गोद लेने का सोचा है उनके मां-बाप से बात की तो बड़ी खुशी हुई जब उन्होंने कहा कि बच्चे स्वयं तो नोनवेज (अभक्ष्य) खाते ही नहीं, घर में बनाने भी नहीं देते हैं। बात मेरे दिल को छू गई और मैंने निश्चय किया कि कुछ बच्चों को मैं एडोप्ट करूँ। अपने बच्चों को तो हर कोई पढ़ाता-लिखाता है लेकिन इन जरुरतमंद बच्चों को समर्थ परिवार के लोग शिक्षा संस्कार देने में सहयोग करें तो कितनी ही जिन्दगियाँ विकसित होकर समाज और राष्ट्र का विकास कर सकेंगी। अतः आये आगे और इस श्रेष्ठ कार्य को आगे बढ़ाने में सहयोग करें।

**—मंजु बोरा एवं स्नेहलता सुराणा**





## विश्व स्तर पर्द- पर्युषण महापर्व समारोह

पर्युषण महापर्व एक विशेष पर्व है जो हमें अपनी आत्मा को शुद्ध करने और हरपल पवित्रता के साथ जीवन जीने की सीख देता है। मूल प्रेरणा यह है कि व्यक्ति को स्वयं को बुराईयों और पापों से अलग करना चाहिए और न केवल व्यक्तिगत बल्कि सम्पूर्ण मानवता के लाभ के लिए सरल और शुद्ध जीवन जीना चाहिए।

उच्च आत्माओं से प्रेरित यह महान त्योहार हमारे लिए जहाँ भी हम राग और द्वेष में लिप्त हैं, उसपर चिंतन करने, पश्चाताप करने, शुद्ध करने और फिर अपने वास्तविक स्वरूप की ओर बढ़ने का एक सुंदर अवसर है।

ज्ञान, ध्यान, तप, स्वाध्याय और त्याग का सतत अध्यास करके आठवें दिन को संवत्सरी के रूप में मनाया जाता है। आईये हम अपने दोषों को पहचाने और ईमानदारी से अपनी गलतियों का अवलोकन करके खुद को शुद्ध करे और स्वयं सम्पूर्ण प्राणी जगत की भलाई के लिए किसी भी गलत कार्य से बचें।

पूज्य ताई माँ ने पुणे में पर्युषण महापर्व का आयोजन किया साथ में थी डॉ. साध्वीश्री सम्प्रज्ञाजी श्रद्धेय आचार्यश्री के पावन सानिध्य में साधना के विशिष्टतम अनुष्ठान हुए। गहन ज्ञान चर्चा, भक्ति एवंतप आग्राधना हुई। अध्यात्म में अनुरक्त साधकों के लिए आलोचना का अनुष्ठान अत्यन्त हृदयस्पर्शी रहा। और उनके आशीर्वाद से इस वर्ष का पर्युषण विदेश में दुबई, केन्या और मस्कट में वीरायतन साध्वी संघ के सानिध्य में सम्पन्न हुआ और भारत में राजगीर साध्वीश्री विभाजी, साध्वीश्री श्रुतिजी, साध्वीश्री दिव्याजी तथा मुनिश्री देवप्रियजी के सानिध्य में पालिताण में साध्वी श्री चेतनाजी की उपस्थिति में, जमशेदपुर में साध्वीश्री शाश्वतजी की उपस्थिति में और कच्छ में साध्वीश्री मनस्वीजी की उपस्थिति में मनाया गया।

### दुबई में पर्युषण समारोह-

पूज्य ताई माँ के आशीर्वाद और प्रेरणा से दुबई जैन समुदाय को पर्युषण महापर्व के शुभ अवसर पर साध्वीश्री शिलापी जी के

ज्ञानवर्द्धक प्रवचनों का अनुभव करने का सौभाग्य मिला। साध्वी सुमेधाजी, साध्वीश्री शिलापी जी के साथ थी और वे वर्षीतप कर रही हैं। भगवान महावीर की शिक्षाओं में डूबने के लिए दुबई और उसके आसपास से उपस्थित लोग उत्सुकता से एकत्र हुए। प्रार्थनाओं से शुरू होकर प्रत्येक दिन के प्रवचन में दैनिक जीवन में धर्म और अध्यात्मिकता के महत्व को समझाया गया।

जीवन में लागु पाया। युवा भी वीरायतन के काम से प्रभावित और उत्साहित थे। व्यवसाय और व्यावसायिक जीवन में जैन मूल्यों पर व्याख्यान देने के लिए भी आमंत्रित किया गया था। जिसे दर्शकों द्वारा खूब सराहा गया। दुबई जैन समुदाय वीरायतन के काम और पूज्य ताई माँ के धर्म और आध्यात्मिकता के व्यावहारिक विचारों से प्रेरित था।

### नैरोबी में पर्युषण महापर्व-



पूज्य ताई माँ के आशीर्वाद से श्री स्थानकवासी जैन संघ ने उपाध्याय श्री यशाजी एवं साध्वीश्री रोहिणीजी के सानिध्य में पर्युषण महापर्व मनाया गया। समाज ने पर्युषण पर्व बड़े उत्साह, रुचि एवं भक्तिभाव से मनाया। प्रतिदिन शाम के प्रतिक्रमण के अलावा हमें सुबह और शाम को बहुत ही सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक विषयों पर उपाध्यायश्री यशाजी के व्याख्यान और शाम को भक्ति भावना एवं



जीवन में धर्म की एकात्मकता पर प्रवचन होते थे। अट्ठाई से मासखमण तक बड़ी तपश्चर्या तथा बच्चों की अद्वम तप की आराधना उल्लेखनीय रही। श्री चन्दना विद्यापीठ के बच्चों द्वारा तीर्थकर महावीर जन्मवाचन पर प्रस्तुत कार्यक्रम प्रशंसनीय थे। ट्रस्टियों, प्रबंधन समिति और श्री स्थानकवासी जैन संघ के प्रत्येक सदस्य की ओर से पूज्य ताई माँ और साध्वी संघ को हमारा हार्दिक धन्यवाद पूर्वक पुनः पुनः पर्युषण पर्वाराधना तथा ध्यान शिविर, शिक्षा शिविर आदि कार्यक्रमों के लिए अनुग्रह पूर्वक अहोभाव पूर्वक हमारा हार्दिक निमन्त्रण।

**मस्कट में पर्युषण महापर्व—**

इस वर्ष आचार्यश्री ताई माँ की आज्ञा



से वीरायतन साध्वी संघ द्वारा मस्कट ओमान में पर्युषण पर्व की विशेष आराधना हुई। बड़े ही श्रद्धापूर्ण माहोल में यह पर्युषण संपन्न हुआ।

#### आदर्श श्रावक रत्न

श्री बकुलभाई मेहता एवं श्री दिलिपभाई मेहता तथा मस्कट सकल संघ के अत्यंत प्रेमपूर्ण आमंत्रण पर साध्वीश्री साधना जी एवं साध्वीश्री संघमित्राजी ने, भगवान महावीर की वाणी एवं परम पूज्य आचार्यश्री जी के संदेशों को, सकल संघ के साथ सांझा किया। जैन धर्म के मूल सिद्धांतों, विशेष कर पांच महाव्रत एवं 12 अनुव्रत वर्तमान में कितने अधिक सामायिक हैं इसका विस्तार से विश्लेषण साध्वीश्री साधना जी ने किया। साध्वीश्री संघमित्राजी के भक्तिरस से आपूरित मधुर भजनों से संघ भावविभोर हुआ। प्रश्नोत्तरी तथा जैन इतिहास के गौरवशाली नररत्नों, एवं

नारीरत्नों की प्रेरक जानकारी भी अत्यंत आकर्षण के विषय रहे।

संघ में तपस्या की तो झड़ी लग गई थी। मासखमन, सोलह, नवाई अठाई, तेला आदि कई तपस्याओं की बहार थी। मस्कट का जैन समाज बहुत ही प्रबुद्ध और अत्यंत सरल है। अत्यंत स्नेह श्रद्धा के साथ इस पर्व की आराधना हुई अत्यंत उत्कट एवं उदार भावना के साथ सभी ने पर्युषण पर्व का लाभ लिया।

#### राजगीर में पर्युषण—



राजगीर वह स्थान है जहां भगवान महावीर ने 14 चातुर्मास ध्यानस्थ रहकर बिताए, सभी के प्रति प्रेम और करुणा का संचार किया, सभी जीवित प्राणियों के साथ मित्रता का संदेश दिया। क्या इस सम्पूर्ण ब्रह्मांड में सबसे महान त्योहार पर्युषण पर्व मनाने के लिए इससे बेहतर कोई और जगह हो सकती है?

शांति और सुकून से भरे इस अद्भुत वातावरण में पर्युषण पर्व बहुत खूबसुरती से



मनाया गया। वीरायतन स्टाफ ने प्रतिदिन सुबह-शाम पाश्वर्जिनालय में साध्वीश्री विभाजी, साध्वीश्री श्रुतिजी, साध्वीश्री दिव्याजी और साधु महाराज देवप्रियजी की उपस्थिति में प्रेम और भक्ति से भरी सुन्दर भक्ति की। प्रतिदिन सुबह और दोपहर में साध्वीश्री विभाजी के साथ जैन धर्म ग्रन्थ अंतकृत दशांग से पाठ किया, भगवान अरिष्टनेमि, श्रीकृष्ण और उनके भाई गजसुकुमाल सहित महान हस्तियों के जीवन पर गहराई से चर्चा की। साध्वीश्री दिव्याजी ने कल्पसूत्र से भगवान महावीर की जीवन कहानी पढ़ी और साथ में श्रावकों के वार्षिक कृत्यों के उपर भी चर्चा की। हमने पांचवें दिन भगवान महावीर का जन्मवाचन दिवस मनाया और दिव्याजी महाराज ने भगवान महावीर के जन्म का सुन्दर विवेचन किया। प्रतिदिन वीरायतन प्रतिक्रमण का संचालन साध्वीश्री दिव्याजी ने ऑनलाईन किया।



यह देखकर बहुत अच्छा लगा कि कई कर्मचारियों ने एक या अधिक दिन उपवास किया और तीर्थकर महावीर विद्यामंदिर पावापुरी की छात्रा कुमारी वैष्णवी एवं सेवाभावी श्री कृष्णाजी जैन ने 8 दिन का उपवास किया।

दिन सभी के प्रति जागरूकता, चिंतन और प्रेम से भरे हुए थे।

#### जमशेदपुर में पर्युषण-

पद्मश्री से सम्मानीत डॉ. आचार्य चन्दनाश्रीजी की आज्ञा से साध्वीश्री शाश्वतजी जमशेदपुर में विष्टुपुर स्थानकवासी जैन संघ में पर्युषण पर्व की आराधना कराने हेतु पधारे। सकल श्री संघ की आचार्यश्रीजी के प्रति श्रद्धा समर्पण और साध्वी शाश्वतजी की प्रेरणा से अत्यंत सुंदर ज्ञानाराधना एवं तपाराधना हुई। पर्वाधिराज के दरम्यान प्रातः प्रार्थना, प्रवचन दोपहर में महिला शिविर में सैकड़ों की



की प्रेरणा से संघ के प्रत्येक सदस्य को रात्रि भोजन त्याग करवाने हेतु पर्युषण दरम्यान चोविहार हाउस की व्यवस्था की गयी, जिसमें

प्रतिदिन सैकड़ों की संख्या में सभी उम्र के संघ के सदस्यों ने लाभ लिया और रात्रि भोजन का त्याग किया। छोटे बच्चों ने भी बड़ी संख्या में सम्पूर्ण पर्युषण दौरान रात्रिभोजन त्याग कर संघ की शोभा बढ़ाई। 8 उपवास, 9 उपवास, 11 उपवास, क्षीर समुद्र की अट्ठाई एवं तीन उपवास, दो उपवास जैसी तपश्चर्या से संघ में मंगलमय वातावरण बन गया। इन सभी तपश्चर्या के शिखर रूप श्री कान्तिलालजी गांधी के पुत्र श्री हर्षदभाई गांधी की पुत्र वधु मधुलिका मेहुल गांधी की मासखमण

[महामृत्युंजय तप] की आराधना सभी के लिए प्रेरणस्पद बनी। मासखमण का पारण साध्वीश्री दिव्याजी की निशा में 16.10.2023 के दिन हुआ। आचार्यश्री ने सम्पूर्ण तप के दरम्यान मासखमण के तपस्वी को अपने आशीर्वाद की अमृत वर्षा से संबल दिया। गांधी परिवार आचार्य श्री की इस कृपा से कृतार्थ हुआ है। आचार्यश्री के आशीर्वाद से जमशेदपुर संघ इसी तरह उनकी छत्रछाया में आराधना प्रत्येक वर्ष करता रहे और महावीर के शासन का सूर्य आसमान में सदैव चमकता रहे।

#### Netra Jyoti Seva Mandiram

Rajgir-Bihar

Netra Jyoti Seva Mandiram is Veerayatan's state-of-the-art Eye Hospital treating thousands of people. Highly skilled doctors offer various treatments, including surgical operations, in clean air-conditioned Operating Theatres.



From 1973 to October- 2023

• Eye Treatment-	<u>31,16,061</u>
• Eye Operations-	<u>3,66,415</u>
• Dental Treatment-	<u>2,39,677</u>

#### Shri Brahmi Kala Mandiram

Rajgir-Bihar



Penetrating art through deep reflection. Acharyashri Dr. Chandnashriji "Shri Tai Maa" has shown her imagination and creativity. The stories of Jainism are gracefully presented. Shri Brahmi Kala Mandiram, created by her holy hands is an example of her immense knowledge, faith and talent.

October- 2023

• Museum Visitor-	<u>67,91,752</u>
-------------------	------------------



## Compassion करुणा

**Gems from Tirukkural, a 2500-years-old-Tamil classic with 1330 couplets composed by the Maharishi Tiruvalluvar as translated by Kannan :**  
**There exists this stupendous beauty called compassion; and therefore, the world exists.**

- It is compassion that keeps the world functioning as it should; there are those who lack it, and they burden the earth.
- Of what use is a tune that can't suit any song?
- Of what use are eyes, which have no compassion?
- An eye that is not abound with compassion, what purpose is it serving on the face, feigning existence?
- Eyes are adorned by compassion; but for it, they would be considered wounds.
- Trees rooted to the land they resemble, those though born with eyes, don't use them to be compassionate.
- Those who lack compassion have no eyes; who truly have eyes can't lack compassion.
- The world belongs to those who do their duty unfalteringly, while being compassionate.
- Being compassionate and patient, even with those who hurt us, is a quality, most admirable.
- Even after seeing poison being poured, they will consume it and converse cordially, they who seek to be captivatingly civilized and compassionate.



जन्मोत्सव पूज्य गुरुदेव  
उपाध्यायश्री अमर मुनिजी महाराज का

तीर्थकरों की समवसरण भूमि वीरायतन के संस्थापक राष्ट्रसन्त उपाध्याय अमरमुनिजी महाराज की 121वीं जन्मजयंती ग्राम ताजीपुर (गादा गांव) में शरद पूर्णिमा को धूमधाम से मनाई गई।

यह समारोह वीरायतन संस्थापिका पूज्य पद्मश्री आचार्य डॉ. चन्दनाश्रीजी की अगुवाई में आयोजित किया गया। जिसमें देश के कोने-कोने से आये भक्तगणों ने भाग लेकर श्रद्धा भक्ति अर्पण का लाभ उठाया। परम पूज्य आचार्यश्री ताई माँ के पावन आशीर्वाद एवं साध्वीश्री साधनाजी एवं साध्वीश्री संघमित्राजी के सानिध्य में यह कार्यक्रम गादा गांव में आयोजित किया गया।

कार्यक्रम की अध्यक्षता समाजसेवी नेमीचंद जी जैन सर्फ़ ने की और मुख्य अतिथि थे श्री अशोकजी सुराणा आगरा। साध्वीश्री साधनाजी ने कहा कि यहाँ सभी जाति, धर्म, प्रान्त के लोगों की उपस्थिति से पूज्य गुरुदेव की ये काव्य पंक्तियाँ साक्षात् एकता का दर्शन कराती है—

“एक जाति हो, एक राष्ट्र हो,  
एक धर्म हो धरती पर।  
मानवता की अमर ज्योति,  
सब ओर जगे जन-जन घर-घर॥”

गुरुदेव के भक्तगणों में हर जाति, पंथ और सम्प्रदाय के लोग शामिल रहे। जिस किसी व्यक्ति को उनके सानिध्य का मौका मिला वह



गुरुदेव का हो गया। साध्वीश्री संघमित्राजी ने इस कौके पर बताया कि श्रद्धेय आचार्यश्री डॉ. चन्दनाश्रीजी ने पूज्य गुरुदेव के साथ बिताये पल कितने सुनहरे और आशीर्वाद की अमृतवर्षा से परिपूर्ण थे। पूज्य गुरुदेव साहित्यकार, कवि, तपस्वी ही नहीं बीसवीं सदी के युगदृष्ट्या मनस्वी सन्त थे।

कार्यक्रम में “नेकी की दीवार”, “निड़ी हेल्थ ग्रुप” एवं “एस. एस. जैन सभा नारनौल” के संयुक्त तत्त्वावधान में गुरुदेव अमरमुनिजी महाराज के जन्मोत्सव पर अर्णव राव जयपुर हॉस्पिटल, नारनौल के विशेषज्ञों द्वारा निःशुल्क मेडिकल हेल्थ चेकअप शिविर

कैम्प श्री सोहनलाल मेमोरियल धर्मशाला गांव ताजीपुर (गादा गांव) में लगाया गया। शिविर में लगभग 80 लोगों ने अपने स्वास्थ्य की जांच कराई। जिसमें विशेष सहयोग जिला रेडक्रॉस सोसायटी नारनौल का रहा। कार्यक्रम में मंच संचालन मुकेश जैन ने किया।

कार्यक्रम में गण्यमान्य उच्च अधिकारी, विद्वान् तथा भक्तजन सभी ने अपने-अपने संक्षिप्त वक्तव्य दिये। सबने पूज्य गुरुदेव के प्रति गहरी श्रद्धा व्यक्त करते हुए वीरायतन के कार्यों की सराहना की। अन्त में करीब एक हजार लोगों ने प्रसाद ग्रहण किया।



## बड़ा कौन ?

एक बार अंक नौ ने अंक आठ को थप्पड़ मार दिया। आठ ने पूछा अरे भाई क्यूं मारा? मेरी क्या गलती थी? तो नौ ने कहा मैं बड़ा हूँ, थप्पड़ मार सकता हूँ और अंक नौ की बात सुनते ही पूरी कक्षा में थप्पड़ों की बौछार शुरू हो गई। आठ ने सात को मारा, सात ने छह को मारा, छह ने पांच को मारा। और ऐसा करते-करते जब दो ने एक को थप्पड़ मारा तो शून्य समझ गया कि पड़ेगा अब तो। वह जाकर दुबक कर कोने में बैठ गया।

शून्य को दुबक कर कोने में बैठे देखकर एक ने पूछा तू क्यों दुबककर बैठा है भैया? तू डर मत मैं तुझे नहीं मारनेवाला हूँ। ऐसा कहते हुए एक जाकर शून्य के बगल में बैठ गया।

बगल में बैठने का मतलब क्या हुआ कि शून्य जो है वह हो गया दस। तब शून्य ने पूछा कि जहाँ सब अपने से छोटों को थप्पड़ मार रहे थे आपने तो मुझे बड़ा बना दिया। ऐसा क्यूं? तब एक ने जबाब दिया कि बड़ा वह नहीं होता जो खुद को बड़ा जाने या माने। बड़ा वह होता है जो दूसरे को बड़ा बना दे।

इन्सान उम्र से बड़ा नहीं होता। इन्सान बड़ा होता है अपनी सोच से, अपने ज्ञान से।

हे प्रभु! सबको सद्गुर्द्विधि देना  
शुरुआत मुझसे ही करना

सत्य के लिए प्रत्येक को अपना  
मार्ग स्वयं ही बनाना होता है।

आलोचना का जबाब जबान  
से नहीं, महत्वपूर्ण कार्य से दें।

सुख इत्र है। जितना दूसरों पर छिड़कोगे  
उतनी सुवास आपके भीतर समायेगी।

जीवन पटरियों पर चलती गाड़ियों की तरह नहीं,  
किन्तु पर्वतों से सागर की ओर दौड़ती नदियों की तरह है।



दीपावली का पर्व आ रहा है। इस पर्व में अनेक लोगों के आतिशबाजी करने का बड़ा शोक होता है। लेकिन आतिशबाजी में लाभ कुछ भी नहीं बल्कि नुकसान बहुत ज्यादा है। जो प्रत्यक्ष दिखाई देता है। जैसे—

1. पटाखें उड़ाने से जहरी धुंआ हवा में फैलकर वातावरण दूषित होता है।
2. पटाखों का जहरी धुंआ श्वास द्वारा शरीर में जाकर अस्थमा, हार्टअटैक आदि बीमारियाँ पैदा होती हैं।
3. पटाखों की विस्फोटक आवाज से हमारी श्रवण शक्ति (सुनने की क्षमता) में कमी आती है।
4. पटाखों की आवाज से पशु-पक्षी भयंकर रूप से डर जाते हैं।
5. पटाखों से मिट्टी में रहते छोटे-छोटे सूक्ष्म जीव-जन्तु मर जाते हैं।
6. हमारे अन्दर की दया करुणा और कोमलता नष्ट हो जाती है।
7. पटाखें उड़ानेवाले की खुद की आंखों पर बुरा असर होता है। हाथ-पैर-कपड़े आदि की जलने की संभावना रहती है।
8. व्यर्थ ही पैसों का अपव्यय होता है।

इन सब दोषों से बचने और पर्यावरण की रक्षा के लिए हम प्रतिज्ञा करें कि आतिशबाजी नहीं करेंगे।



## नियति बलवान है या पुरुषार्थ

शिष्य का प्रश्न है, 'नियति या भाग्य को बलवान कहा जाता है तो क्या पुरुषार्थ को बलहीन कहा जाय?'

गुरु समाधान देते हैं, 'नियति का अर्थ है होनहार अर्थात् एक परिस्थिति गत एवं प्रकृतिगत व्यवस्था। सिद्धान्त की भाषा में यह एक निकचित (निश्चित) अवस्था है। पुरुषार्थ से नियति का निर्माण होता है। और नियति के निर्माण के बाद पुरुषार्थ अकिञ्चित्कर हो जाता है। सही दिशा में पुरुषार्थ करने के बावजूद यदि उसका परिणाम विपरीत आता है तो उसे नियति ही मानना होगा। इस प्रकार किसी भी कार्य की निष्पत्ति में पांचों कारणों (काल, स्वभाव, नियति भाग्य और पुरुषार्थ) की आवश्यकता होती है।'

जैसे-



- काल- धरती में बीज पड़े तो एक निश्चित समय पर ही फलित होगा।
- स्वभाव- आम या नींबू का बीज अपने-अपने स्वभावनुसार ही फलेंगे।
- नियति- बाढ़, सूखा आदि से बीज नष्ट भी हो सकता है।
- भाग्य- बीज बोनेवाले के भाग्य में होगा तो ही उसे फल प्राप्त होंगे।
- पुरुषार्थ- बीज बोने के बाद उसकी देव-रेख का पुरुषार्थ होगा तभी वह बीज पल्लवित पुष्पित और फलित होगा।



जनरल करिअप्पा के भाई कुमारप्पा पहली बार गांधीजी से मिलने वर्धा के आश्रम पहुँचे। वहाँ सिरपर गमछा बांधे एक वृद्ध झाडू लगा रहे थे। कुमारपाल ने उसे कहा कि जाओ गांधीजी को मेरे आने की खबर दो। वृद्ध ने पूछा, गांधीजी ने कितने बजे मिलने का समय दिया है?

कुमारप्पा गुस्से से बोले, इससे तेरा क्या मतलब? तू अपना जाके खबर दे कि जनरल करिअप्पा के भाई कुमारप्पा आये हैं। समय तो चार बजे का दिया है। वृद्ध ने विनम्रता से कहा “लेकिन अभी तो साढे तीन बजे हैं। कुमारप्पा तिलमिला उठे। बोले- ज्यादा होशियार मत बनो। जो मैंने कहा वैसा करो। तो वह वृद्ध चुपचाप अन्दर जाकर लौटा और बोला, चार बजे मिलेंगे। कुमारप्पा बड़े बेमन से गाढ़ी पर बैठे।

घड़ी ने चार के डंके बजाये उसी के साथ वह वृद्ध सिर का गमछा खोलकर बोले, साहब! क्या काम है मुझे ही लोग गांधी कहते हैं। कुमारप्पा ऐसे हो गये जैसे कांटों तो खून न हो। लेकिन गांधीजी की समय प्रतिबद्धता एवं महानता उनके हृदय को आन्दोलित कर गई।

## स्मृति पुष्प

गुरुमक्त स्वर्णीय श्री विजय सिंह जी सुजन्ती की धर्मपत्नी श्रीमती इंदूगाला सुजन्ती जयपुर निवासी का निधन दिनांक 11-10-2023 को हो गया है। आप गुरुदेव और आचार्यश्री डॉ. चन्दना जी महाराज साहब की परम भक्त थी। आप पीछे भरा पूरा परिवार छोड़ कर गई हैं। ईश्वर उनकी आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

पुत्र: राजीव सुजन्ती, पुत्रवृद्धरम्मी, पौत्री-दामाद श्रेया-सिद्धार्थ, पौत्र कुणाल, पौत्री हिरण्य



**88th**  
Birthday Celebration  
**2024**

*Save the Date*

88th Birthday Celebration of  
Padmashri awardee  
Param Pujya Dr. Acharyashri Chandanaji Maharaj  
"Shri Tai Maa"

24 January 2024 - Arrival  
25 - 26 January 2024

Veerayatan, Rajgir-Bihar

For Registration

Mr. Bhaskar Bhattacharya  
Mobile No. : +91 9304331868, Email: veer2024rajgir@gmail.com



## तीर्थकर महावीर के परिनिवर्ण पर्व पर प्रभु की अंतिम देशना का स्वाध्याय



आगम, दर्शनशास्त्र एवं प्राचीन भाषा की विद्वद्वरेण्य पद्मश्री डॉ. आचार्यश्री चन्दनाश्रीजी जैन इतिहास में प्रथम साध्वी हैं जिन्होंने आगम अनुवाद एवं सम्पादन का कार्य किया। उन्होंने तीर्थकर महावीर की अंतिम देशना उत्तराध्ययन सूत्र का अनुवाद, सम्पादन एवं विशिष्ट टिप्पण का महत्वपूर्ण कार्य सन् 1972 में जैन कमाणी भवन कलकत्ता में सम्पन्न किया। और अपनी गुरुमाता विदुषी साध्वीरल श्री सुमति कुंवरजी के साथ शास्त्र का सस्वर संगान सामूहिक स्वाध्याय चिन्तन-प्रतिपादन पूर्वक मनोज्ञ शैली से प्रारंभ किया। सन् 1980 के झारिया चातुर्मास में दीपर्व पर उत्तराध्ययन सूत्र की विशाल समोरण की भव्य रचना के साथ नृत्य-संगीत में उत्तराध्ययन सूत्र की मनोहारी प्रस्तुति हुई। जो एक सुन्दर परम्परा बन गई है। प्रस्तुत परम्परा के अनुरूप पार्श्वजिनालय वीरायतन में दीपावली महापर्व के उपलक्ष में प्रभु की अंतिम देशना का स्वाध्याय हुआ।



'Shri Amar Bharti' printed and published at Patna by Tansukh Raj Daga on behalf of VEERAYATAN, Rajgir. Dist. Nalanda, Rajgir-803116 (Bihar)  
Website : [www.veerayatan.org](http://www.veerayatan.org)